अध्याय 7

नगरीय समाज में परिवर्तन, विकास एवं चुनौतियाँ, आधारभूत संरचना, आव्रजन, नियोजन, आवास

समाजशास्त्रीय अध्ययनों का विषय क्षेत्र बेहद विस्तृत है और यही कारण है कि जब हम समाजशास्त्र की बात करते हैं तो हम यह विश्वास करके चलते हैं कि इस विषय की शाखा समाज के हर क्षेत्र तक फैली हुई है। विद्यार्थियों के लिए विश्वास करना सहज नहीं होता है कि समाजशास्त्र विषय के ही अभिन्न अंग हैं–नगरीय समाजशास्त्र, चिकित्सा समाजशास्त्र, अपराधशास्त्र आदि। नगरीय समाजशास्त्र के तत्वों को समझना हमारे लिए इसलिए आवश्यक हो जाता है क्योंकि बीते कुछ दशकों में नगरों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है जिससे समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है। नगरीय समाजशास्त्र एक गहन अध्ययन का विषय है परन्तु चूँकि हम प्रथम बार इसका अध्ययन करेंगे अत: इस विषय के महत्त्वपूर्ण पक्षों की संक्षिप्त जानकारी हमारे लिए आवश्यक है।

अध्याय में हम जिन महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे वह निम्नाँकित है–

- नगरीय समाज में परिवर्तन के विभिन्न पक्ष,
- नगरों में विकास एवं चुनौतियाँ,
- नगरीय आधारभूत संरचना,
- नगरों की ओर आव्रजन,
- नगरीय नियोजन तथा
- नगरीय आवास

उपर्युक्त सभी विषय आपस में एक-दूसरे से इस तरह जुड़े हुए हैं कि एक की चर्चा करते हुए, दूसरे पक्ष को जोड़े बगैर, उसे समझना सहज नहीं होगा। जैसे नगरों में विकास एवं चुनौतियों में अन्तर्सम्बन्ध हैं अर्थात् नगरों में विकास के लिए जो आवश्यक आधार है उन आधारों का अभाव ही चुनौती है। नगरों में विकास का प्रथम लक्षण आधारभूत संरचना की उपलब्धताहै ।स पष्टहैइ नमेंत िनोंह िबन्दुओंक िए कस िथप ढ़ना आवश्यक है जिससे विषय की सारगर्भिता बनी रहे और विषय में भटकाव की स्थिति उत्पन्न न हो।

नगरीय समाज में परिवर्तन के विभिन्न पक्षों की चर्चा करने से पूर्व आवश्यक हो जाता है कि हम यह जानें कि 'नगरीय समाज' क्या है? उसके क्या लक्षण हैं? इसे समझने के बाद ही नगरीय समाज में परिवर्तन के विभिन्न पक्षों का जानना व समझना सहज होगा।

नगरीय समाज में परिवर्तन, विकास एवं चुनौतियाँ

समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य से नगरीय का अर्थ नगर में रहने वाले समुदाय से है। सम्पूर्ण मानव समाज को किन्हीं लाक्षणिक आधारों पर नगरीय तथा ग्रामीण समुदायों में विभाजित किया जा सकता है। 'नगरीय' शब्द नगरीय समुदाय विशेष को इंगित करता है जो कि नगरीय क्षेत्र में निवास करता है। नगरीय समाज के विभिन्न लक्षणों तथा विशेषताओं को कुछ समाजशास्त्रियों ने अध्ययन की विषयवस्तु बनाया है। इस दृष्टि से पार्क, बर्गस, सोरोकिन, जिम्मरमेन तथा विर्थ के कार्य उल्लेखनीय हैं। 'नगरीय' शब्द का प्रयोग समुदाय तथा समाज विशेष के लिए प्रयुक्त किया गया है। नगरीय क्षेत्र उस परिपूर्णता के रूप में समझा जाता है जो मुख्यत: उद्योग, नौकरी, व्यापार तथा अन्य व्यवसायों में संलग्न होता है। नगरीय समुदाय प्रमुखत: तकनीकी कार्यों, वस्तुओं के निर्माण से सम्बन्धित रहता है।

नगरीय मानव जीवन की विशिष्ट सामाजिक व्यवस्था होती है। नगरीय पारिवारिक इकाई एक व्यावसायिक इकाई है। नगरीय सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति को व्यावसायिक क्रियाएँ करने की स्वतंत्रता होती है। मूलत: नगरीय जीवन मानवीय औद्योगिक अवस्थाओं का एक संकुल है। इस संकुल में अनेकानेक आर्थिक क्रियाएँ संचालित होती हैं जो एक-दूसरे के लिए पूरक होती हैं। इन क्रियाओं में व्यक्तियों के मध्य किसी प्रकार के प्राथमिक सम्बन्धों की व्यवस्था नहीं होती है।

नगरीय शब्द की अवधारणा के अन्तर्गत व्यक्ति, समुदाय, परिवार, परिस्थिति और सामाजिक सम्बन्धों की व्यवस्था सम्बन्धी तत्त्वों का प्रमुख स्थान है।

नगरीयता के सम्बन्ध में समाजशास्त्री क्वीन और कारपेंटर ने कहा है, "हम नगरीयता का प्रयोग नगर निवास की प्रघटना को पहचानने के लिए करते हैं।" वहीं विर्थ ने नगरीयता के सम्बन्ध में लिखा है, "नगरीयता लक्षणों का वह पुँज है जो नगरों में एक विशिष्ट प्रकार का जीवनउ त्पन्नक रताहै।"ि वर्थके इ सि वचारक ास मर्थनब र्गसव एंडरसन ने भी किया है।

विर्थ के अनुसार, 'नगर की विषमता', व्यक्तियों के एक-दूसरे पर निर्भरता, बाहरी दिखावे की प्रवृत्ति, तथाकथित सभ्य और बुद्धिमत्तापूर्ण जीवन प्रणाली, ये सब नगरीयता के परिचायक लक्षण हैं।

विर्थ ने 'अमरीकन जनरल ऑफ सोशियोलॉजी' में प्रकाशित अपने लेख में स्पष्ट लिखा है कि नगर में नगरीयता का विकास होता है और नगरीयता नगरों का विकास करती है। नगरों की उत्पत्ति घनी और मलिन बस्तियों के अविस्थापन का परिणाम है। इन बस्तियों में नगरीयता से परिपूर्ण विशिष्ट प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। इन सामाजिक सम्बन्धों से विकसित जीवन का ढंग नगरीयता कहलाता है।

यह सर्वव्यापी सत्य है कि देश, काल की सीमा से परे 'परिवर्तन' समाज का यथार्थ है। इस परिवर्तन की गति, किसी भी सामाजिक व्यवस्था के ऊपर निर्भर होती है। जहाँ ग्रामीण समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया धीमी है वहीं औद्योगिक एवं महानगरीय संस्कृति तेज गति से परिवर्तित हो रही है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया में प्राचीन एवं नवीन के बीच का संघर्ष, लगातार बना हुआ है जिसके फलस्वरूप पुरातन परम्पराओं, आदर्शों, मानदण्डों एवं मूल्यों का स्थान नवीन परम्पराएँ, मूल्य आदि ले रहे हैं।

वर्तमान समय में सम्पूर्ण समाज तीव्र वैज्ञानिक, राजनैतिक, प्रौद्योगिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास से प्रभावित हो रहा है। विशेषकर नगरीय परिवेश में उक्त प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक व स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहे हैं। नगरीय समाज की अपनी विशिष्ट प्रकृति है। नगरीय समाज की प्रमुख संस्थाओं का विवेचन करते हुए ही, नगरीय समाज के परिवर्तन को समझा जा सकता है। जब हम नगरीय समाज की बात करते हैं तो उसके अध्ययन के केन्द्र बिन्दु सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक संस्थाएँ होती हैं इसलिए नगरीय समाज में परिवर्तन का स्पष्ट तात्पर्य नगरीय सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक संरचना में परिवर्तन है। इस परिवर्तन को हम निम्न आधारों पर विश्लेषित कर सकते हैं–

(1) व्यक्तिवादिता– नगरीय समाज के मूल्य व्यक्तिवादी हैं अर्थात् हर व्यक्ति के दृष्टिकोण का दायरा स्वयंहित है। नगरीय संस्कृति की आधारभूत विशेषताओं में से एक विशेषता यह रही है, परन्तु बीते दो दशकों में इस स्थिति में बड़ी ही तेजी से परिवर्तन हुआ है। व्यक्तिवादिता इस सीमा तक बढ़ गई है कि व्यक्ति स्व-हित साधने के लिए दूसरों का अहित करने में संकोच नहीं करता।

(2) व्यवसायों की बहुलता एवं भिन्नता– नगरीय समाज की आर्थिक संरचना का मूल आधार उसकी 'अर्थ-शक्ति' है। नगर में रहने वाला एक बड़ा वर्ग विभिन्न व्यवसायों में संलग्न है पर इस परम्परा में बीते कुछ सालों में एक नवीन परिवर्तन जो बड़ी ही तेजी से देखा गया है, वह है 'खरीददारी' का तरीका या माध्यम। भारतीय नगरीय संस्कृति में यह बदलाव सिर्फ आर्थिक संरचना में होने वाले परिवर्तन को ही नहीं बता रहा अपितु क्रेता-विक्रेता के बीच स्थापित सम्बन्धों में परिवर्तन को भी इंगित कर रहा है। टीवी और इंटरनेट के माध्यम से खरीददारी के नवीन बाजार ने, आर्थिक संस्था में स्थापित वर्षों के क्रेता-विक्रेता के व्यक्तिगत सम्बन्धों को प्रभावित किया है।

(3) गुमनामता– यूँ तो नगरीय संस्कृति में व्यक्ति स्वयं को दूसरोंस`अ लगर खकर,अ पनाअ धिकतमस मयअ पनीउ न्नतिअ ैर विकास के मार्गों को खोजने में व्यतीत करना हितकारी समझता है परन्तु यहाँ भी एक असमंजसता की स्थिति दिखाई देती है। एक ओर, नगरीय संस्कृति बीते दशकों में व्यक्ति को एकांतवाद की ओर प्रवृत्त करने के मार्ग प्रशस्त कर रही थी परन्तु बीते एक दशक में एकांतप्रिय संस्कृति ने एक नवीन स्वरूप ग्रहण कर लिया है। अपने करीबी व्यक्ति या पड़ोसी को न जानने वाला व्यक्ति सोशल मीडिया के सहारे नवीन एवं अनजान लोगों से छद्म रिश्ते स्थापित कर रहा है। जिससे उसके लिए भावनात्मक संकट उत्पन्न हो रहे हैं।

(4) स्वार्थजनित सामाजिक सम्बन्ध– नगरीय समाज की सदैव से यह विशेषता रही है कि वहाँ सामाजिक सम्बन्धों का आधार निज-स्वार्थ रहे हैं और स्वार्थहित की समाप्ति के पश्चात् रिश्ते स्वत: ही समाप्त हो जाते हैं। परन्तु बीते कुछ समय में यह स्थिति उस पराकाष्ठा पर पहुँच गई है कि नगरीय सामाजिक सम्बन्धों की आधारभूमि छिन्न-भिन्न होती जा रही है। जिसके परिणामस्वरूप मानवीय भावनाएँ लुप्त हो रही है और नगरीय संस्कृति मानवीय से कहीं अधिक मशीनीकृत रूप ले रही है, यहाँ तक कि अपने स्वार्थहित के लिए रक्त सम्बन्धों को भी तिलांजलि दी जा रही है।

(5) मानवीय सम्बन्धों की टूटन– नगरीय संस्कृति में, सामाजिक सम्बन्ध इस कदर बिखर चुके हैं कि यहाँ हर व्यक्ति भीड़ में नितान्त अकेला है। गलाकाट प्रतियोगिता, महत्त्वाकांक्षाओं का बोझ और इन परिस्थितियों के बीच किसी भी रिश्ते पर विश्वास न कर पाने की प्रवृत्ति ने, नगरीय समाज की बहुल आबादी को अवसाद का शिकार बना दिया है। विभिन्न अध्ययन यह बताते हैं कि नगरीय संस्कृति से सम्बन्ध रखने वाले लगभग 36प्रतिशत लोग मानसिक अवसाद का शिकार हो रहे हैं।

(6) नगरीय पारिवारिक संरचना में बदलाव– नगरीय सामाजिक परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष पारिवारिक संरचना में हो रहे बदलाव हैं, चूँकि किसी भी सामाजिक ढाँचे का अविभाज्य अंग 'पारिवारिक संरचना' है इसलिए इसके विभिन्न पक्षों का विश्लेषण, अलग-अलग आधारों पर देखना आवश्यक है।

(क) पितृसत्तात्मक अधिकारों में कमी– भारतीय सामाजिक-संस्कृति अपने मूल रूप में पुरुषसत्तात्मक रही है इसलिए देश की पारिवारिक संरचना मूलत: पितृसत्तात्मक है परन्तु वैधानिक स्तर पर बेटियों को समकक्ष अधिकार प्राप्त होने एवं पैतृक संपत्ति पर घर के पुरुष सदस्यों के समान ही अधिकारों की प्राप्ति की पहल ने, अप्रत्यक्ष रूप से पितृसत्तात्मक व्यवस्था को प्रभावित किया है। माउरर ने लिखा है कि, ''वास्तव में हम परिस्थितियों में प्रबलता प्राप्त करने की ओर ध्यान देते हैं जिसमें बच्चे ही नीति को निश्चित करते हैं। अत: झुकाव सन्तानात्मक परिवार की ओर है जिसमें बच्चा प्रबल कार्य करता है।'' यदि बच्चों की

शक्ति इसी प्रकार बढ़ती गई तो शीघ्र ही नगरीय परिवार सन्तानात्मक परिवार हो जाएगा।

(ख) परिवार के आकार में ह्रास– नगरीय परिवार के आकार में निरन्तर ह्रास हो रहा है। पति, पत्नी तथा बच्चों के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धी साथ में बहुत कम रहते हैं। सत्य तो यह है कि नगरीय संस्कृति 'एकल परिवार' की परम्परा को प्रोत्साहित करती है।

(ग) नातेदारी सम्बन्धों का प्रभावहीन होना– नगरीय संस्कृति में दिनोंदिन रक्त सम्बन्धों का महत्त्व कम होता जा रहा है। रक्त सम्बन्धियों, विशेषकर द्वितीय तथा तृतीयक नातेदारी सम्बन्धों को समय और धन के अपव्यय के साथ जोड़कर देखा जाता है और यही कारण है कि सम्बन्धों का आंकलन लाभ-हानि के गणित के आधार पर किया जाता है।

(घ) स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन– एक आम धारणा यह है कि भारतीय स्त्रियाँ बीते वर्षों में सशक्त बनी हैं। वह पुरुषों के समकक्ष स्थान पा चुकी हैं और उन्हें सभी क्षेत्रों में संवैधानिक अधिकार प्राप्त हैं परन्तु यह पूर्ण सत्य नहीं है। इस तस्वीर का एक दूसरा पहलू यह है कि नगरों में निवास कर रही महिलाएँ, बीते डेढ़ दशकों में गहरे मानसिक अवसाद का शिकार हुई हैं। वे गहरे दबाव में हैं। एक ओर परम्परागत पारिवारिक दायित्व यथावत कायम हैं वहीं दूसरी ओर नगरीय संस्कृति की 'भौतिकवादिता' प्रवृत्ति को कायम रखने के लिए उन्हें घर से बाहर निकलकर, अर्थअर्जन के दायित्वों का भी निर्वाह करना पड़ा है। घर और बाहर के दायित्वों के मध्य संतुलन बनाते-बनाते कामकाजी महिलाओं का शरीर बीमारी का गढ़ बन रहा है। यही नहीं, जो स्त्रियाँ सिर्फ घर संभालने का कार्य कर रही हैं, समाज की अर्थलोलुपता की मानसिकता उन्हें पीड़ा पहुँचा रही है। परिवार और सामाजिक दायरे के मध्य निठल्ले बैठे रहने का उलाहना, घरेलू महिलाओं को मानसिक रूप से व्यथित कर रहा है।

(च) बच्चों का बढ़ता एकाकीपन– नगरीय समाज की भौतिकवादी संस्कृति के चलते अभिभावक दिन-रात का अन्तर किये बगैर, घर से बाहर जाकर काम करने में जुटे हुए हैं, जिसके परिणामस्वरूप बच्चे घर पर नितांत अकेले रहने के लिए विवश हैं। उनके इस एकाकीपन में अगर उनका कोई साथी बनाता है, तो वह है टेलीविजन, वीडियो और कम्प्यूटर गेम्स। ये खेल हिंसा से भरपूर होते हैं और जिनके पात्रों का अन्ततोगत्वा लक्ष्य, खेल को जीतना होता है। समाज वैज्ञानिक विभिन्न शोधों में यह सिद्ध कर चुके हैं कि ऐसे बच्चे, समाज से स्वयं को धीरे-धीरे अलग करके एक छद्म दुनिया में जीने लगते हैं। उनका एकाकीपन उनको हिंसक और विद्रोही बना देता है। देश में ऐसे बच्चों की संख्या में निरन्तर बढ़ोतरी हो रही है।

(छ) किशोर अपराध में बढ़ोतरी– भौतिकवादी संस्कृति ने नगरीय समाज को भावनात्मक रूप में जहाँ शून्य कर दिया है, वहीं कम समय में अधिक से अधिक पाने की लालसा में नगरीय समाज दौड़ रहा है और इसी का परिणाम है अपराधों में बढ़ोतरी। बीते एक दशक में ऐसे युवाओं की संख्या में बढ़ोतरी हुई है जिन्होंने अल्पायु में अपनी अंतहीन इच्छाओं की पूर्ति हेतु अपराध का रास्ता अपनाया है। अपहरण, हत्या, लूट जैसी आपराधिक गतिविधियों में संलग्न ये किशोर निम्नवर्ग से ही नहीं अपितु मध्यम वर्ग से हैं। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा जारी आँकड़ों के अनुसार भारतीय दण्ड संहिता के तहत पंजीकृत किशोर अपराधों में 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। 2010 में जहाँ नाबालिगों द्वारा की गई अपराधों की संख्या 22,740 थी वहीं 2014 तक यह मामले बढ़कर 33,526हो गये।

(ज) विवाह संस्था का कमजोर पड़ना– भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की एक प्रमुख विशेषता 'विवाह संस्था' रही है, परन्तु नगरीय समाज में यह सबसे अधिक प्रभावित हुई है। वैवाहिक रिश्तों में प्रेम, समर्पण और त्याग की भावना शून्य हो गई है और कहीं-कहीं भावात्मक रिश्तों में भी धैर्य एवं विश्वास की जगह प्रतिद्वंद्विता ने ली ली है। आँकड़ों के अनुसार भारत में विवाह-विच्छेद की दर प्रति हजार पर 13 हो गयी है। महानगरों में यह संख्या तेजी से बढ़ रही है। वर्ष 2010 में मुम्बई में जहाँ सम्बन्ध-विच्छेद के 5,243 मामले सामने आये थे वहीं वर्ष 2014 तक यह संख्या 11 हजार 667 तक पहुँच गयी।

(7) राजनैतिक संस्थाओं का प्रभाव– नगरीय समाज में, राजनैतिक संस्थाएँ भी पिछले 10-15 वर्षों में विशेष रूप से प्रभावित हुई हैं। आज भी जहाँ गाँवों, कस्बों और छोटे नगरों में राजनीति में जातिगत समीकरण महत्त्व रखते हैं, वहीं नगरीय समाज में शिक्षा, अधिकारों के प्रति जागरूकता और राजनैतिक पार्टियों के कार्यों के आंकलन के आधार पर, नेताओं का चुनाव होने के रुझान दिखाई देने लगे हैं। यहाँ तक कि महिला मतदाता उन प्रत्याशियों को वोट देने के प्रति उत्सुक दिखाई देती हैं जो सामाजिक बुराई को दूर करने एवं ढाँचागत सुविधाओं को मुहैया कराने की बात करते हैं।

नगरीय समाज में, परिवर्तन की प्रक्रिया निरन्तर बनी हुई है। सोशलन`टवर्किंगत थाइ`टरनेटस`स्कृतिन`,स ामाजिकअ ौरअ र्थिक संस्थाओं को तो प्रभावित किया ही है वहीं राजनैतिक संस्थाएँ भी इससे अछूती नहीं रही हैं। इन संस्थाओं में हो रहे परिवर्तनों से नगरीय समाज तनाव में है। संक्रमण काल से गुजरती नगरीय संस्कृति में, समाज के लिए पहचान का संकट उपस्थित हो गया है। पुरातन और नवीन के बीच का चुनाव, समाज को बिखेर रहा है, ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि अंधाधुंध नकल करने की प्रवृत्ति को त्यागकर समाज उन्हीं तत्त्वों को स्वीकार करे जो उन्हें सकारात्मक विकास की ओर प्रवृत्त करें। साथ ही भौतिक सुखों की प्राप्ति के लिए, पारिवारिक मूल्यों का त्याग, नगरीय समाज के लिए घातक न सिद्ध हो, इसलिए इस पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

नगरीय समाज में विकास एवं चुनौतियाँ–

नगरों का ऐतिहासिक और पुरातात्विक महत्त्व स्वयंसिद्ध है। नगर निर्माण, आधारभूत ढाँचा की उपलब्धता, नगरीय विकास की योजनाएँ

किसी भी समाज की सोच और गतिशीलता को ही परिलक्षित नहीं करती, अपितु नगरीय समाज के विकास का अपरिहार्य अंग भी हैं। किसी भी नगर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास के लिए उनके प्रयास से उनके निवासियों के सांस्कृतिक लक्ष्य का अनुमान लगाया जा सकता है। नगरीय क्षेत्र सामाजिक रूप से समुदाय और सहकारिता को जन्म देते हैं वहीं आर्थिक दृष्टिकोण से वे उद्योग एवं व्यवसाय के केन्द्र होते हैं। राजनीतिक इकाई के रूप में वे शक्ति और सरकार का केन्द्र होते हैं। संयुक्त राष्ट्र के मानव पुनर्वास केन्द्र द्वारा किए गए एक अध्ययन के उपरान्त 'नगर' के औचित्य के सन्दर्भ में कहा, ''नयी शताब्दी के नवीन नगरीय विश्व में नगरों, उपनगरों और समूहों में हम में से अधिकांश लोग निवास करेंगे और कार्य करेंगे, जहाँ प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम दोहन करते हुए प्रदूषण उत्पन्न किया जाएगा, जहाँ राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों में संघर्ष के कारण उबाल आएगा और अन्ततः वहीं वैश्विक और मानवीय सुरक्षा की वास्तविक जड़ें मजबूत होंगी।'' भारतीय नगरीय समाज भी विकास की इस वैश्विक प्रवृत्ति का साझेदार बना हुआ है। विगत पाँच दशकों में भारत की नगरीय जनसंख्या में 50 से 60 लाख औसत वृद्धि हुई है। एक आंकलन के मुताबिक वर्ष 2020 तक भारत की नगरीय जनसंख्या में 41.8करोड़ अधिक लोग होंगे। वर्तमान में भारत में तीन महानगर (एक करोड़ से अधिक जनसंख्या), 19 बड़े नगर (दस लाख से अधिक जनसंख्या), 300 नगर और लगभग 3800 छोटे और मध्यम आकार के नगर हैं।

नगरीय समाज में विकास के मुद्दे–

सुनियोजित बस्तियाँ और सार्वजनिक स्थलों तक पहुँच– नगरीय समाज का विकास तभी सम्भव है जब उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो तथा सहज सुलभ जीवन के मार्ग उनके लिए प्रशस्त हों। इस परिप्रेक्ष्य में अमेरिकन प्लानिंग एसोसिएशन ने, नगर की विकास नीति के जिन मुख्य सिद्धान्तों का उल्लेख किया, वे भारतीय नगरों के परिप्रेक्ष्य में भी महत्त्वपूर्ण हैं। इस विकास नीति के मुख्य सिद्धान्त हैं, ''मानवीय पैमाने के मुताबिक बस्तियों और समुदायों का विकास, मिश्रित उपयोग वाले केन्द्र, सुपरिभाषित सामुदायिक हितों के इलाके जैसे–कृषि हरित क्षेत्र, वन्य जीवन कॉरिडोर या स्थायी रूप से खेती की जमीन या खुले स्थल के तौर पर संरक्षित हरित क्षेत्र।''

नगरों में विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने से पूर्व उन समस्याओं की पहचान आवश्यक है, जो राष्ट्रों के बिखरे और बेढंगे फैलने के कारण पैदा हुई है। साथ ही साथ भौतिक विकास की सीमा निर्धारित करना भी जरूरी है। इसके साथ ही स्थानीय स्तर पर एक विस्तृत योजना प्रणाली और निर्णय लेने की क्षमता जो इस आधार पर निर्धारित हो कि नगर में रहने वाले निवासी भविष्य में अपने आसपास के भौतिक तथा अभौतिक पर्यावरण को किस रूप में देखना चाहते हैं?

विकास के पहलुओं का स्पष्ट जुड़ाव, नगरीय समाज की उस पीड़ा से है जहाँ लोगों को कार्यस्थल तक पहुँचने के लिए प्रतिदिन लम्बी दूरी तय करनी पड़ती है।

सहज आवागमन केन्द्रिक विकास– नगरीय विकास के लिए आवश्यक है कि परिवहन की योजना इस तरह बने जिसमें सिर्फ चार पहिया वाहनों के लिए नहीं, बल्कि नगर की आम एवं निर्धन आबादी के लिए परिवहन के सार्वजनिक एवं सरकारी साधनों की उपलब्धता हो। यूनिवर्सिटी ऑफ सदर्न कैलिफोर्निया के मार्लन बोरनेट कहते हैं कि चूँकि अर्थव्यवस्थाएँ अब तेजी से एक-दूसरे से जुड़ रही हैं, ऐसे में सहज आवागमन केन्द्रित विकास शहरों के लिए आवश्यक है। बोरनेट के अनुसार, ''शहर आंशिक तौर पर इसलिए विकसित होने लगते हैं क्योंकि बड़े शहरों, इलाकों में अनेक तरह की कम्पनियाँ बेहतर ढंग से संचालित हो पाती है। जैसे-जैसे हम ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ रहे हैं, शहरों में रह रहे लोगों की उत्पादकता से जुड़े लाभ अधिक ताकतवर होते जा रहे हैं। इन्हें बढ़ती गतिशीलता से साझा गुण से जोड़ दें, तो यह साफ हो जाता है कि शहरी इलाकों में आबादी के बढ़ते घनत्व से निपटने के लिए योजना निर्माण करने वालों को रचनात्मक तरीकों से जूझना पड़ेगा।''

जल प्रबंधन– नगरीय समाज के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं में से एक है 'जल को सामूहिक संसाधन माना जाये' तथा इसके प्रबंधन सुनियोजित एवं स्थायित्वपूर्ण हों। शहरी विकास के लिए आवश्यक है कि एक ऐसी नीति निर्मित हो जो मनुष्य की तात्कालिक और भविष्य के जल की आवश्यकता को पूर्ण करने के साथ-साथ भूगर्भीय जल के संरक्षण पर भी ध्यान केन्द्रित करें।

जल प्रबधन एक कठिन कार्य है क्योंकि साधारणतः जल प्रबंधन स्थानीय स्तर पर ही होता है क्योंकि सैकड़ों घटक इसके प्रबंधन के साथ जुड़े होते हैं और उनके मध्य तारतम्यता बैठाना सहज नहीं होता इसलिए यह एक चुनौती बन जाता है। उदाहरणतः जल उपलब्ध कराने वाली एजेंसियाँ, उनकी गुणवत्ता का उत्तरदायित्व नहीं लेतीं। यह तय है कि जल संरक्षण, जल प्रबंधन का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। शहरों के विकास में जल का बेहतर उपयोग, जल संरक्षण एवं वर्षा जल का सुनियोजित तरीके से उपयोग, महती भूमिका निभा सकते हैं।

ऊर्जा प्रबंधन– ऊर्जा की उपलब्धता किसी भी नगरीय समाज की अपरिहार्य आवश्यकता है। शहरों में बढ़ता जनसंख्या का दबाव, उसकी अपेक्षाकृतम ाँगक ाब हुतअ धिकह ोना,उ पलब्धऊ र्जास ंसाधनोंप र निरन्तर दबाव बनाये हुए हैं। इसी स्थिति में ऊर्जा के दूसरे विकल्प को खोजने की आवश्यकता है। नये ऊर्जा स्रोतों, जैसे कि सौर, वायु, बायोमास, शहरी/औद्योगिक कचरे से छोटी तथा सूक्ष्म ऊर्जा परियोजनाएँ लगाई जा सकती है। ऊर्जा और जल प्रबंधन एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। नगरों के सुनियोजित विकास में ऊर्जा प्रबंधन, ऊर्जा उत्पादन तथा संरक्षण की महती भूमिका है।

कचरे का प्रबंधन– किसी भी नगर के सुनियोजित विकास का एकम हत्त्वपूर्णभ ागउ सश ाहरके क चरेक ाप्रबंधनह ैक चरान गर निवासियों को अस्वस्थकर जीवन ही नहीं देता अपितु नगर के सौन्दर्य को

भी खत्म कर देता है। कचरा स्थानीय स्तर पर उपभोक्ता, व्यवसायी और दूसरे संगठनों के जरिये पैदा होता है और शहर में चारों तरफ बिखरा रहता है तथा प्रदूषण की वजह बनता है। शहर के विकास के लिए प्रदूषण की रोकथाम, कचरा प्रबंधन की सुविधाओं के स्थान के सन्दर्भ में एक विस्तृत योजना प्रक्रिया की माँग करता है, जिसमें अर्थपूर्ण जन-भागीदारी एवं सहमति भी शामिल है। विशेषकर औद्योगिक एवं चिकित्सकीय कूड़े का प्रबंधन इस तरह से होना चाहिए कि ये मनुष्य और पर्यावरण को नुकसान न पहुँचा सकें। न्यूनतम कचरा उत्पन्न हो, इसके लिए ऐसे कानून की आवश्यकता है, जो पर्यावरण के लिए नुकसानदायक उत्पाद न हो, जो पहले इस्तेमाल हुई चीजों के दोबारा इस्तेमाल की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करे और जो उत्पाद व पैकिजिंग का पुनर्चक्रण न किये जा सके, उनको प्रतिबंधित करे।

उत्पाद के पुन: प्रयोग के लिए कानून बनाने की आवश्यकता है, जिसके तहत कचरा एकत्र करने और उसे अलग करने की योजनाएँ तैयार की जा सकें, ताकि आम हानिकारक कूड़ों को अलग किया जा सके। स्थानीय, प्रांतीय और अपशिष्ट भराव क्षेत्र में तय अवधि के बाद भी कूड़ा डालनेक ोय ोजनाअ ैरअ नुमतिके ि लएस मन्वयअ ैरस हयोगक ो प्रोत्साहित किया जाये। यह महत्त्वपूर्ण है कि योजनागत तथा नियमन प्रक्रिया ऐसी हो, जिससे अपशिष्ट भराव क्षेत्र के आसपास रहने वाले, सामाजिक रूप से कमजोर वर्ग के लोगों पर इसका हानिकारक असर न पड़े।

प्राकृतिक व सांस्कृतिक संसाधनों का संरक्षण– उन्नत नगर विकास के लिए उसके सांस्कृतिक संसाधनों का बहुत अधिक महत्त्व है। भारतीय नगरों में इसका नितांत अभाव पाया जाता है यद्यपि चण्डीगढ़ देश के उन शहरों में से एक है जहाँ प्राकृतिक व सांस्कृतिक संसाधनों का संरक्षण, नगरीय विकास का एक महत्त्वपूर्ण लक्षण रहा है। इस दिशा में पश्चिमी नगरों के प्रेरणादायक उदाहरण हैं जिन्होंने नगरों के विकास में सांस्कृतिक संसाधनों के संरक्षण पर विशेष रूप से ध्यान दिया। ओहायो के हैमिल्टन ने अपनी एक परियोजना के माध्यम से, 2015 में पर्यावरण संरक्षण एजेंसी से 'नेशनल अवॉर्ड फॉर स्मार्ट ग्रोथ अचीवमेंट' का पुरस्कार प्राप्त किया। हैमिल्टन की उपलब्धि को अगर विश्लेषित करते हैं तो पाएँगे कि इसमें उनके वर्षों के अथक प्रयास रहें। रचनात्मक सोच, रणनीतिक योजना और सामुदायिक संवाद के साथ इस शहर और ऐतिहासिक उत्प्रेरक संस्थाओं की मदद से नवीन आर्थिक विकास की पटकथा लिखी। इन्होंने ऐसी परियोजनाएँ बनाईं जिनके जरिये शहर के मुख्य वाणिज्यिक इलाके में घूमने की जगह बनी, साथ ही नयी सुविधाओं, रोजगार की सम्भावनाओं, आवास के विकल्पों की सुविधा बनी। इस सम्पूर्ण परियोजना का मूलभूत आधार इस सिद्धान्त पर टिका था कि शहर के महत्त्वपूर्ण इलाके का स्वस्थ होना समूचे समुदाय के स्वास्थ्य के लिए महत्त्वपूर्ण है।

दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य यह है कि भारतीय नगर तेजी से आर्थिक सुदृढ़ता की समस्त ऊँचाइयों को प्राप्त कर लेना चाहते हैं बिना भविष्य में उनके परिणामों के बारे में सोचे और यही कारण है कि शहर का अधिकांश भाग अट्टालिकाओं से पट गया है। कहीं ऐसे भू-भाग नहीं हैं जहाँ हरियाली हो, घूमने और बच्चों के खेलने की व्यवस्था हो। जो जगह पूर्व में बनी भी है, उन पर भू-माफिया का कब्जा एक बड़ी समस्या बनाकर उभर रहा है।

सामान्यत: रोजगार केन्द्रों में बढ़ोत्तरी, बड़े-बड़े मॉल का बनाना, आवासीय क्षेत्रों का बहुल मात्रा में स्थापित होना, हमारी दृष्टि में नगरों का विकास है। परन्तु यह मात्र एक ऐसा बाह्य ढाँचा है जो नगरों को निर्मित करता है परन्तु मानवीय जरूरतों को और उनके जीवन को सम्मानजनक स्थिति प्रदान करने में सक्षमता तभी मिल सकती है जब मनुष्य स्वस्थ और खुशहाल वातावरण प्राप्त कर सके और यह तभी सम्भव है जब प्राकृतिक और साँस्कृतिक संसाधनों का संरक्षण हो।

नगरीय विकास के जो महत्त्वपूर्ण लक्षण हैं, उनको प्राप्त करना ही नगरीय समाज की सबसे बड़ी चुनौती है।

चुनौतियाँ– नगरीय समाज में, वैश्वीकरण के कारण उत्पन्न हुई चुनौतियों की, स्वैच्छिक या दबाव के कारण स्वीकृति बढ़ती जा रही है। तीव्र तकनीकी विकास तथा सामान्य आर्थिक विचारधारा के कारण सम्पूर्ण विश्व देशों के संघ की जगह 'नगरों का संघ' बन गया है, जो कि इंटरनेट (अन्तरताना) के जरिये आपस में इस तरह गुंथा हुआ है कि उसको विभक्त करना सम्भव नहीं है। महत्त्वपूर्ण प्रश्न यहाँ यह उत्पन्न होता है कि क्या भारतीय नगर इस चुनौती के लिए तैयार हैं? इस विषय के गहन विश्लेषण के लिए कुछ मुद्दों की पहचान आवश्यक है।

मुख्य मुद्दे– आवास, राजनीति, गरीबी, प्रदूषण, भौतिक और वित्तीय समस्यायें वे मुद्दे हैं जो भारत के नगरीय प्रशासन के समक्ष चुनौती बनकर खड़े हैं। यह चुनौती केवल मात्र प्रशासन की नहीं है। वास्तव में यह समस्या सम्पूर्ण समुदाय की चेतना, त्याग, समर्पण, दायित्व बोध तथा रचनात्मक मानसिकता से जुड़ी हुई है। इसलिए नैतिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक रूप से सक्षम नगरीय भारत के निर्माण की आवश्यकता है।

भारतीय मनीषी की शक्ति और सभ्यता के मूल्यों को पुन: संयोजित करते हुए भविष्य के हेतु एक बेहतर जीवन पद्धति विकसित करने के लिए, नगर प्रशासकों तथा तकनीकी विशेषज्ञों के लिए एक अध्ययन संस्थान बनाये जाना उचित होगा, जिससे यह संस्थान प्रशिक्षण के साथ ही साथ 'मानव पुनर्वास' की नयी सम्भावनाओं को भी खोज सकें। वे सम्भावनाएँ, जो वैश्वीकरण के कारण विभिन्न रूपों, आकारों एवं आवरणों में हमारे सामने आ रही हैं।

नगरीय समाज की सबसे बड़ी चुनौती सामाजिक असमानता है। भारत सरकार के राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के अनुसार लगभग 22 प्रतिशत लोग आज भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहे हैं। एक विकसित तथा खुशहाल समाज की प्रथम आवश्यकता एवं दायित्व यह है कि वो आर्थिक व सामाजिक आधार पर पिछड़े लोगों को सार्वजनिक तौर पर सुविधाएँ उपलब्ध कराएँ।

आधुनिक भारत के निर्माता डॉ. अम्बेडकर के अनुसार, ''एक कल्याणकारी समाज के गठन के लिए सबका विकास जरूरी है।'' यह वक्तव्य नगरीय समाज का लक्ष्य है परन्तु इसकी पूर्ति सबसे बड़ी चुनौती–

1. सामाजिक समानता– जॉन हॉब्स के सिद्धान्त ''राज्य की उत्पत्ति व सामाजिक समझौते का सिद्धान्त यह कहता है कि सामाजिक तौर से राज्य का निर्माण हो और एक सफल राज्य के निर्माण के लिए यह चुनौती होती है कि वो अपने नागरिकों को कैसे संतुष्ट रखेगा।'' भारतीय सामाजिक व्यवस्था के लिए यह सबसे बड़ी चुनौती है, क्योंकि निर्धन व्यक्ति का संघर्ष अपनी मूलभूत आवश्यकता को भी पूरा न कर पाने का है। ऐसे में यह राज्य का दायित्व बनता है कि ऐसे संसाधनों को वह विकसित करे जिससे गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले लोगों का जीवन स्तर बेहतर हो सके। अगर हम ऐसा कर पाने में सफल नहीं होते, यह हमारी असफलता है। इस सन्दर्भ में डॉ. अम्बेडकर का कथन विचारणीय है कि ''समाज में हर व्यक्ति का समान अधिकार है और जिस समाज में समानता नहीं है, उसका मूल रूप से विकास सम्भव नहीं है।''

2. आर्थिक विकास– आर्थिक विकास किसी भी देश, राज्य और नगर की प्राथमिक आवश्यकता है। आर्थिक विकास का असंतुलित वितरण ही सबसे बड़ी चुनौती है। भारतीय नगरों की चुनौती यह है कि यहाँ धन सम्पदा चंद लोगों के हाथों में केन्द्रित है और इस तरह आर्थिक विकास की कुँजी धनाढ्य वर्ग के मध्य ही केन्द्रित हो जाती है। इस चुनौती से निपटने के लिए यूँ तो सरकारी स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं परन्तु अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ता के लिए आवश्यक है कि राष्ट्रीय आय को बढ़ाया जाए और राष्ट्रीय आय को बढ़ाने के लिए हमें 30 प्रतिशत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों का जीवन बेहतर करना होगा ताकि सकल घरेलू उत्पाद और सकल राष्ट्रीय उत्पाद को बढ़ावा मिले।

3. प्रदूषित वातावरण– नगरीय समाज प्रदूषित वातावरण में रहकर अस्वस्थ जीवन जीने के लिए विवश है। नगरों की स्थापना में कल-कारखानों का योगदान है परन्तु उससे निकले अपशिष्ट के प्रबंधन का अभाव, प्रदूषण का एक कारण है। आवासों के लिए पेड़ों को काट देना नगरीय संस्कृति का जैसे अभिन्न हिस्सा बन चुका है। वाहन और मशीनों से निकलने वाली खतरनाक गैसों से वातावरण जहरीला हो चुका है, यहाँ तक कि औद्योगिक इकाइयों से सम्बन्धित खदानों जैसे लौह-अयस्क तथा कोयले के खदानों की धूल से पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है तथा विभिन्न रोग उत्पन्न हो रहे हैं।

4. स्वच्छता का अभाव– भारतीय नगरों की पहचान, उसके कूड़े के ढेरों से होती है। वस्तुओं के उपयोग के पश्चात् घरों से प्रतिदिन कूड़ा-करकट तथा अनेक प्रकार के ठोस अपशिष्ट बाहर निकाले जाते हैं जिनका ढेर सड़क पर या इधर-उधर फैला रहता है। ये कूड़े के ढेर बीमारियों के गढ़ बन रहे हैं। अपशिष्ट प्रबन्धन का अभाव नगरों के लिए एक बड़ी चुनौती बन कर उभरा है।

5. आवासीय समस्या– अत्यधिक जनसंख्या के संकेन्द्रण के कारण विश्व के वृहत नगरों में आवास की उपलब्धता एक बहुत बड़ी चुनौती बनकर उभरी है। नगरों में प्रति वर्ष बड़ी संख्या में लोग ग्रामीण अथवा बाहरी क्षेत्रों से आकर बसते हैं, किन्तु जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में नगरों में आवासों की संख्या नहीं बढ़ पाती है, जिसका परिणाम होता है गृहों का अभाव तथा आवासीय समस्या।

नगरों के समेकित और सतत् विकास के सामने अनेक चुनौतियाँ मुँह बाये खड़ी हैं। शहरी भूमि के बदलते उपयोग से पर्यावरण पर पड़ते प्रभाव, समेकित आवासन, सार्वजनिक स्थानों के बदलते परिदृश्य, कम होते संसाधन, जल निकासी और ठोस कचरा प्रबन्धन, मलिन बस्तियों का बढ़ता वर्चस्व, नगरीय समाज के विकास को अवरुद्ध करके एक चुनौती बन कर उभरा है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक अड़चनों और अवसरों की पड़ताल की आवश्यकता है। योजना की आधारभूमि में ऐसे प्रक्रियों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है जिनसे आकांक्षाओं, विकास और शहरी आयोजन के बीच एक प्रकार का संतुलन बना रहे। योजना प्रक्रिया में सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय और सुशासन सम्बन्धी चिंताओं को समग्र रूप से देखे जाने की जरूरत है। शहरी क्षेत्रों में समानता, उनके आर्थिक रूप से कारगर होने और उन तक सहज पहुँच के लिए भौगोलिक कारकों को क्षेत्रवार जरूरतों (शिक्षा, व्यवसाय, मनोरंजन, स्वास्थ्य तथा अन्य सेवाएँ) के साथ जोड़े जाने की जरूरत है।

आधारभूत संरचना

नगर सुख-सुविधाओं की मौजूदगी के चलते, हमेशा से ही आकर्षण के केन्द्र रहे हैं। सत्य तो यह है कि ये विकास के इंजन बन चुके हैं, परन्तु यह भी सच है कि नगर मानव की सबसे जटिल संरचनाओं में से एक है। नगरों में व्यवस्था तथा अव्यवस्था साथ-साथ चलती है। बढ़ती जनसंख्या व घटती सुविधाओं के कारण नगरों की पहचान समस्या स्थलों के रूप में होने लगी है। बिजली, पानी, सीवर, सड़क और परिवहन प्रणाली के अभाव में नगरों को समस्याओं का केन्द्र माना जाने लगा है।

आधारभूत संरचना से तात्पर्य परिवहन, इमारतें, सार्वजनिक सुविधाएँ हैं जो कि किसी नगर में रहने वाले निवासियों का जीवन सहज एवं सरल बनाती है। इन सुविधाओं के अभाव में नगर खोखले ढाँचे के समान होता है जहाँ नगरीय समाज अपनी मूलभूत सुविधाओं के लिए संघर्ष करता है।

यह सत्य है कि इस समय नगरीय समाज भारी दबाव में है। यद्यपि हमारा 90 प्रतिशत सरकारी राजस्व तथा 60 प्रतिशत राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद शहरों से प्राप्त होता है किन्तु नगर निकायों के स्तर पर शहरों को सकल घरेलू उत्पाद का केवल 0.6 प्रतिशत हिस्सा ही मिलता है। नगरों की समस्याएँ जहाँ जटिलता और विस्तार दोनों ही दृष्टि से बढ़ती जा रही है, वहीं उनके समाधान के लिए स्रोत घटते जा रहे हैं।

विभिन्न अध्ययन यह बताते हैं कि देश में लगभग ढाई करोड़

मकानों की कमी है, जिसमें शहरी क्षेत्रों में यह 70 लाख के करीब हैं। हमारे देश में जनसंख्या का घनत्व विश्वभर में सबसे अधिक है। लगभग 19 प्रतिशत भारतीय परिवार 10 वर्ग मीटर से कम जगह में गुजर-बसर करते हैं। शहरी क्षेत्रों में तो लगभग 44 प्रतिशत परिवार केवल एक कमरे में ही रहते हैं। नगरी आधारभूत संरचना और नगर निकायों की सेवा सुविधाओं की स्थिति भी समान रूप से हताशापूर्ण है। देश में करीब 34 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या के लिए अपने घरों के आस-पास बरसाती पानी के निकासी की व्यवस्था भी नहीं है। देश में लगभग 60 प्रतिशत नगर निकाय ऐसे हैं जो रोजाना निकाले जाने वाले अपशिष्ट का लगभग 40 प्रतिशत से भी कम भाग इकट्ठा करते हैं। प्राय: अधिकांश शहरी कूड़ा, सड़क के किनारे, मकानों और कारखानों के आस-पास सड़ता-गलता रहता है। इसका एक बड़ा भाग नालियों में बह जाता है, जिससे नालियाँ अवरुद्ध हो जाती है और आसपास का क्षेत्र दुर्गंध, कीचड़ से भर जाता है। नगरों में कम से कम 35 प्रतिशत जनसंख्या ऐसी बस्तियों में रह रही है जो कि गंदी व अस्थायी है। ये बस्तियाँ न केवल जनसंख्या घनत्व या नागरिक सुविधाओं के अभाव के कारण, अपितु अस्वच्छ जीवनशैली और नागरिक दायित्वों के प्रति गहरी उदासीनता के कारण गंदगी से त्रस्त रहती है।

सड़कों की चौड़ाई और वाहनों की संख्या के बीच बढ़ते हुए असंतुलन के कारण वाहन सुगमता से चल नहीं पाते। इसका उदाहरण मुम्बई में 'बेस्ट' बस है, जिसके चलने की औसत गति केवल 12 किलोमीटर प्रति घंटा है। इन अव्यवस्थाओं के चलते सड़क दुर्घटनाएं बढ़ती है। संयुक्त राष्ट्र के एक अध्ययन से ज्ञात होता है कि भारत में अमरीका की तुलना में प्रति वर्ष सड़क दुर्घटनाओं से अधिक मौतें होती हैं, जबकि भारत में अमरीका की तुलना में केवल 20 प्रतिशत सड़क वाहन हैं।

नगरीय आधारभूत ढांचे की स्थिति

1. जलापूर्ति– व र्ष2 011क ेज नगणनाके अ नुसार7 1.2 प्रतिशत शहरी जनसंख्या को पेयजल की आपूर्ति उनके परिसर में प्राप्त होती है जबकि वर्ष 2001 की जनगणना में यह 65.4 प्रतिशत था। उसी प्रकार वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार 20.7 प्रतिशत जनसंख्या को जलापूर्ति परिसर के निकट प्राप्त होती है, जबकि 2001 की जनगणना में यह प्रतिशत 25.2 प्रतिशत था। किसी भी नगर में चौबीस घंटे जल की आपूर्ति वर्तमान में नहीं है।

2. स्वच्छता– भारत के नगरों में स्वच्छता की चुनौती गंभीर है। वर्ष 2009-10 में शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा 423 वर्ग-1 शहरों का स्वच्छता मूल्यांकन से ज्ञात होता है कि गंदलापन, अवशिष्ट क्लोरीन और थर्मो टोलेरेंट कोलिफॉर्म जीवाणु के 3 आधारभूत जल गुणवत्ता मानदंडों पर केवल 39 शहर ही खरे उतरे हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, 32.1 प्रतिशत शहरी जनसंख्या पाइपयुक्त सीवेज प्रणाली का प्रयोग करती है तथा 12.6 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या अभी भी खुले में शौच करती है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड रिपोर्ट 2009 के अनुसार अधिष्ठापित सीवेज शोधन की क्षमता केवल 30 प्रतिशत है, जबकि क्षमता का उपयोग लगभग 72.2 प्रतिशत है, जिसका अर्थ है कि अधिकांश नगरों में निस्तारण से पहले उत्पादित सीवेज के केवल 20 प्रतिशत का उपचार होता है।

3. ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन– भारत के नगरों में उत्पादित ठोस अपशिष्ट का प्रबन्धन और निस्तारण एक बड़ी समस्या है। सीपीसीबी रिपोर्ट 2005 के अनुसार लगभग 1,15,000 एमटी, नगर अपशिष्ट का उत्पादन होता है। अधिकांश शहरों में अपशिष्ट को अपशिष्ट भरणस्थल में ले जाकर भर दिया जाता है। ठोस अपशिष्ट का वैज्ञानिक उपचार और निस्तारण व्यावहारिक रूप से कहीं मौजूद नहीं है।

4. शहरी परिवहन– सार्वजनिक परिवहन निम्न मध्य आय वाले देशों (फिलीपींस, वेनेजुएला, इजिप्ट) में 49 प्रतिशत और ऊपरी मध्य आय वाले देशों (जैसे दक्षिण अफ्रीका, कोरिया, ब्राजील) में 40 प्रतिशत की तुलना में भारत में नगरीय परिवहन का लगभग 22 प्रतिशत है। देश के नगरों में सार्वजनिक परिवहन की समग्र तस्वीर अभी भी अच्छी नहीं है। इसलिए आमतौर पर केवल वे व्यक्ति ही सार्वजनिक परिवहन का प्रयोग करते हैं, जिनके पास दूसरा कोई विकल्प नहीं है। 2012 के अनुसार 423 वर्ग-1, शहरों में से केवल 65 शहरों में ही औपचारिक सिटी बस सेवा उपलब्ध है और उसमें भी सिटी परिवहन के लिए बसों के वित्त पोषण के कार्यक्रम के जरिए केन्द्र सरकार का हस्तक्षेप है।

यह सर्वमान्य सत्य है कि भारतीय नगरों की अधोसंरचनात्मक व्यवस्था कमजोर है, यद्यपि बीते वर्षों में उसकी बेहतरी के लिए प्रयास किये जा रहे हैं। अधिक से अधिक उन्नति के मायने इतने संकुचित हो चुके हैं कि नगरीय निवासियों को घूमने, यहाँ तक कि खुले वातावरण में साँस लेने में भी दिक्कत आ रही है। बड़े शहरों में सड़कों के लिए छोड़े गए स्थान का ही उदाहरण लें, तो कोलकाता में इसके लिए पूरे शहर के कुल स्थान का पाँच प्रतिशत तथा मुम्बई में मात्र 11 प्रतिशत स्थान ही रखा गया है। दूसरी ओर अमेरिका जैसे विकसित देशों में कुल नगरीय विकास का 25 से 30 प्रतिशत तक सड़कों के फैलाव के लिए रखा जाता है।

दुनिया के बीस में से सबसे अधिक जनसंख्या वाले पाँच शहर भारत में हैं। देश में नगरीय आबादी जिस गति से बढ़ रही है, उससे 2030 तक इसके 70 करोड़ से अधिक होने का अनुमान है। इस संदर्भ में मैकिंजे कम्पनी की 2014 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार इस नगरीय ढाँचे में परिवर्तन को संभालने के लिए भारत को भविष्य में पाँच सौ से अधिक नगरों की आवश्यकता पड़ेगी।

चार्ल्स डिकेंस ने अपनी पुस्तक 'ए टेल ऑफ टू सिटीज' में लिखा है कि नगर अब धीरे-धीरे थकने लगे हैं। यूँ तो चार्ल्स ने नगरों की यह कहानी यूरोप में औद्योगीकरण के बाद टूटते बिखरते शहरों के विषय में दोहराई थी। उन्होंने नगरों में उत्पन्न उस युग का दर्द, छटपटाहट व

उम्मीद तथा निराशा जैसे भावनाओं को अभिव्यक्त किया है, परन्तु चार्ल्स की कहानी के किरदार भारत के नगरों में भी दिखाई दे रहे हैं। नागरिक सुविधाओं के अभाव में उनका जीविकोपार्जन का संघर्ष और बढ़ गया है। अत: अब आवश्यकता है कि नगरों में विकास की ऐसी दीर्घकालिक योजनाएँ बनाई जाये, जिससे नगरों में योजनाबद्ध तरीके से लोगों को बसाया जा सके। केन्द्र सरकार ने 'प्रोविजन ऑफ अर्बन अमेनिटीज टू रूरल एरियाज' जिसके लिये दिवंगत राष्ट्रपति अब्दुल कलाम ने पहल की थी, के साथ ही जवाहर लाल नेहरू अर्बन रिन्यूवल मिशन, मेक इन इंडिया, अर्बन हाउसिंग मिशन तथा अटल मिशन फॉर रिजुवेनेशन एंड अर्बन ट्रांसफॉरमेशन जैसे अनेक कार्यक्रम शुरू किये हैं, जिससे टिकाऊ और समेकित नगरीय विकास को बढ़ावा मिले।

(क) स्मार्ट सिटीज कार्यक्रम–

इस कार्यक्रम का उद्देश्य भारत में विभिन्न शहरों को स्मार्ट शहरों में तब्दील करना है, जिससे आर्थिक विकास की सुविधाएँ उपलब्ध करा के स्वच्छ और स्वस्थ पर्यावरण उपलब्ध कराने के साथ-साथ प्रौद्योगिकी का उपयोग कर इन शहरों के लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार आये। चूँकि स्मार्ट सिटी योजना का मुख्य उद्देश्य शहर में रहने वाले लोगों के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि करना है इसलिए आधारभूत संरचना इस योजना का एक महत्वपूर्ण तत्व है, जैसे पर्याप्त पानी की आपूर्ति, सुनिश्चित विद्युत आपूर्ति, उचित स्वच्छता जिसमें ठोस अवशेष शामिल हैं। कुशल शहरी गतिशीलता एवं सार्वजनिक परिवहन प्रणाली की सुविधा, किफायती आवास सुविधा, मजबूत सूचना प्रौद्योगिकी संयोजकता, नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करना, उचित स्वास्थ्य अथवा शिक्षा प्रणाली सुगम एवं प्रभावी बनाना, प्रभावी शासन, ई-गवर्नेंस एवं नागरिकों की भागीदारी।

(ख) अटल मिशन फॉर रेजुवेनशन एंड अर्बन ट्रांसफॉर्मेशन (अमृत मिशन)–

अमृर्ता मशनक ाम ुख्यउ द्देश्यह ै घ ारोंम ेंब ुनियादीस ुविधाएँ उपलब्धक रानाज ैसेर्ि कज लअ ापूर्ति,स ीवेज,श ाहरीप रिवहनअ ादि जिससे सभी नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हो सके।

अमृत मिशन के मूल तत्व–

I. पानी की उचित आपूर्ति, यथा जलापूर्ति प्रणालियों का निर्माण एवं रख-रखाव, पुराने जलापूर्ति प्रणालियों का पुनर्वास, पुराने जल निकायों का कायाकल्प करना आदि।

II. सीवेज सुविधा के अंतर्गत भूमिगत सीवेज प्रणाली का निर्माण एवं रख-रखाव, पुरानी सीवेज प्रणालियों एवं उपचार संयंत्रों का पुनर्वास, जल संसाधनों की पुनरावृत्ति अथवा अपशिष्ट जल का पुन: उपयोग करना।

III. सेप्टिक सुधार के अंतर्गत मल प्रबन्धन तथा नाली और सेप्टिक टेंक की जैविक और यांत्रिक सफाई करना।

IV. शहरी परिवहन–उचितफ ुटपाथोंए वंर ास्तोंक ाि नर्माण करना एवं गैर मोटर चलित परिवहन के लिये सुविधायें उपलब्ध कराना, विभिन्न स्थानों पर बहुस्तरीय पार्किंग का निर्माण तथा रखरखाव करना। दूरसंचार, स्वास्थ्य शिक्षा आदि भी अमृत मिशन के मूल तत्वों में से एक हैं।

(ग) राष्ट्रीय शहरी परिवहन नीति–

इस नीति का उद्देश्य अपने शहरों के भीतर नौकरी, मनोरंजन और ऐसी अन्य आवश्यकतों को बढ़ती नगरीय आबादी के लिये सुरक्षित, उचित, त्वरित, विश्वसनीयता, आरामदायक और सतत पहुँच सुनिश्चित करना है। इस उद्देश्य को निम्नलिखित तरीकों के द्वारा प्राप्त किया जाना है–

I. शहरी यातायात को परिणामी जरूरत की बजाय शहरी नियोजन स्तर पर प्रमुख मानक के रूप में समाहित करना

II. सभी शहरों में एकीकृत भूमि उपयोग और परिवहन नियोजन को बढ़ावा देना ताकि यात्रा दूरी को कम किया जा सके।

III. सार्वजनिक परिवहन और गैर मोटरीकृत सार्वजनिक परिवहनों के साधन को बढ़ावा देने के लिये इनके अधिकतम उपयोग को बढ़ावा देना।

सभी सरकारी योजनाओं और नीतियों का मूलभूत उद्देश्य यही है कि नगर में आधारभूत संरचना का निर्माण एवं संरक्षण इस तरह किया जाये कि नगरीय समाज जीवन को खुशहाल तरीके से व्यतीत कर सके। ऐसा संभव तभी हो सकता है जब पूर्ण निर्भरता, सरकारी योजनाओं पर न होकर, नागरिकों की स्वयं की भागीदारी भी हो।

आव्रजन

आव्रजन सामाजिक परिवर्तन का सूचक है। अन्य स्थानों से आकर जिस स्थान पर मनुष्य बस जाते हैं उसके संदर्भ में स्थानान्तरण को आप्रवास या आव्रजन और इसमें भाग लेने वालों को आप्रवासी कहते हैं। उत्तरी अमेरिका में यूरोप से आये हुये लोगों को यूरोपीय आप्रवासी कहा जाता है। आप्रवास या आव्रजन के दो रूप होते हैं–आंतरिक आव्रजन तथा अन्तर्राष्ट्रीय आव्रजन। संपूर्ण विश्व प्रवास और अप्रवास का अनुभव कर रहा है। आव्रजन से जहाँ कुछ सामाजिक, जनांकिकी, समस्याएँ सुलझती हैं, वहीं कुछ नवीन समस्याएँ उत्पन्न भी होती हैं। आव्रजन का इतिहास बहुतप्र ाचीनए वंर्ि वश्वव्यापीर हाह ै ।अ ांतरिकअ ाव्रजनक ीप्र क्रिया उपनिवेश काल से ही प्रारम्भ हुई है।

भारत ग्रामीण से अर्थ-शहरी समाज में, रूपांतरण के दौर से गुजर रहा है। 31 प्रतिशत से कुछ अधिक की आबादी अब शहरी क्षेत्रों में निवास करती है। उच्च घरेलू उत्पाद वाले राज्यों में शहरी क्षेत्रों में रहने वाली आबादी का स्तर ऊँचा है। उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा की तुलना में गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक में उल्लेखनीय रूप से अधिक शहरीकरण है। आँकड़ों के अनुसार 1971 की जनगणना में भारत में 79.78 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण थी, जो समय के साथ घटती चली गई। इसी तरह दस वर्ष के अंतराल के पैमाने में ग्रामीण जनसंख्या 1981 में

76.27, 1991 में 74.28, 2001 में 72.22 तथा 2011 में 68.70 प्रतिशत सिमट कर रह गयी है। इस तरह ये आँकड़े स्पष्ट: इंगित कर रहे हैं कि शहरों में ग्रामीणों का आव्रजन बढ़ता जा रहा है।

आव्रजन के कारण– जनसंख्या स्थानान्तरण के आकार, गति एवं दिशा को दो विपरीत गुणों वाली शक्तियाँ नियंत्रित करती है, जिन्हें 'आकर्षण शक्ति' और 'प्रतिकर्षण शक्ति' कहते हैं। किसी स्थान पर या प्रदेश में उपलब्ध प्राकृतिक एवं आर्थिक संसाधन तथा निवास योग्य भौगोलिक दशाएँ अन्य प्रदेशों में मनुष्यों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं।

जनसंख्या आव्रजन को प्रभावित करने वाले कारकों को चार वर्गों में विभाजित किया जाता है–

1. प्राकृतिक कारक, 2. आर्थिक कारक, 3. सामाजिक सांस्कृतिक कारक और 4. राजनीतिक कारक।

1. प्राकृतिक कारक– प्राकृतिक कारकों में जलवायु परिवर्तन, बाढ़, भूकम्प, सूखा आदि प्रमुख हैं। जलवायु और मौसमी प्रभावों के अतिरिक्त अधिक वर्षा के कारण नदियों में उत्पन्न बाढ़ों से जल विस्तृत भूमि, आवास आदि जलमग्न हो जाते हैं परिणामस्वरूप लोग अपना स्थान छोड़ने के लिए विवश हो जाते हैं। किसी क्षेत्र में मिट्टियों के अनुपजाऊ हो जाने, खनिज स्रोतों के समाप्त हो जाने, शुष्क एवं अर्द्धशुष्क भागों में जलाशयों के सूख जाने पर, जीविका के साधनों के अभाव में वहाँ से जनसंख्या का पलायन हो जाता है।

2. आर्थिक कारक– जनसंख्या के स्थानान्तरण में अन्य कारणों की तुलना में आर्थिक कारक महत्वपूर्ण होते हैं। जिन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन के लिए उपयुक्त भौगोलिक दशाएँ पर्याप्त कृषि योग्य भूमि, सिंचाई के साधन, उपजाऊ मिट्टी, उपयुक्त जलवायु आदि विद्यमान होती है, वे जनसंख्या के आकर्षण केन्द्र बन जाते हैं और वहाँ बाहर से जनसंख्या का आव्रजन बढ़ जाता है।

नगरों की आर्थिक सुदृढ़ता, रोजगार साधनों की उपलब्धता के कारण नगरों में गाँव से लोगों का आव्रजन होता है।

3. सामाजिक-सांस्कृतिक कारक– जनसंख्या स्थानान्तरण के लिये उत्तरदायी कारकों में कुछ सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों का विशेष महत्व है। शहरों में रहने वाले परिवारों से जब ग्रामीण परिवार से सम्पर्क रखने वाली कन्या का विवाह होता है तो स्वाभाविक रूप से शहरों में उनका आव्रजन होता है। किंग्सले डेविस ने भी उद्धत किया है कि भारत में विवाह के कारण स्त्रियों का शहर की ओर प्रवास की मात्रा उच्च है जबकि भारतीय जनता की गतिशीलता कम पायी जाती है। शिक्षा के केन्द्र में भी आव्रजन होता है, क्योंकि यह एक ओर मनुष्य की कार्यकुशलता और योग्यता को बढ़ाते हैं, वहीं दूसरी ओर उन प्राचीन परम्पराओं तथा रूढ़ियों से मुक्ति दिलाते हैं जो कि व्यक्ति के विकास में बाधक हैं।

बहुत से तीर्थस्थल आव्रजन का केन्द्र बनते हैं। कई बार ये आव्रजन स्थायी और कई बार अस्थायी भी होता है। हिन्दू, तीर्थ यात्री बड़ी संख्या में काशी, हरिद्वार, मथुरा, प्रयाग जैसे धार्मिक स्थलों की ओर प्रवास करते हैं।

4. राजनीतिक कारक– राजनीतिक कारणों से बलात् स्थानान्तरण भी होते हैं। युद्ध में बनाये गये बन्दियों तथा दास बनाये गये लोगों को विजेता देशों के लिये स्थानान्तरित करने के भी अनेक उदाहरण मिलते हैं।

आव्रजन के प्रकार–

(अ) कालानुसार आव्रजन-

I. प्रागैतिहासिक आव्रजन–प्रागैतिहासिकअ ाव्रजनम ुख्यत: जलवायु परिवर्तन के कारण होते थे।

II. ऐतिहासिक आव्रजन–ऐतिहासिक काल में होने वाले आव्रजनों को मुख्यत: तीन श्रेणियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है (अ) प्राचीन कालीन आव्रजन (ब) मध्यकालीन आव्रजन (स) आधुनिक आव्रजन।

यूनानी तथा रोमन साम्राज्यों के विस्तार के कारण होने वाले आव्रजन, भारत में आर्यों का आव्रजन इसके उदाहरण हैं।

(ब) अवधि के अनुसार आव्रजन–

I. दीर्घकालीन आव्रजन–ब्रिटिश काल में चाय बागानों में काम करने के लिए श्रीलंका, दक्षिण अफ्रीका आदि में भारतीय श्रमिकों का आव्रजन हुआ।

II. अल्पकालीन आव्रजन–देशाटन, तीर्थयात्रा, राजनीतिक उद्देश्यों के लिये हुआ स्थानान्तरण इसमें सम्मिलित है।

III. दैनिक आव्रजन–बड़े नगर या औद्योगिक केन्द्र में बाहर उपनगरीय क्षेत्रों से बड़ी संख्या में रोज लोगों का आव्रजन होता है।

IV. मौसमी आव्रजन–जिन स्थलों का मौसम अत्यधिक ठंडा तथा शुष्क होता है वहाँ मानव स्थानान्तरण होता है।

(स) आकार के अनुसार आव्रजन–

I. वृहत आव्रजन या वृहद संख्यक आव्रजन और

II. लघु आव्रजन या अल्पसंख्यक आव्रजन।

(द) क्षेत्र के अनुसार आव्रजन–

I. अन्तर्राष्ट्रीय आव्रजन

II. अन्तर्देशीय या आन्तरिक आव्रजन।

नगरों की ओर आने वाले आप्रवासी लोगों का विश्लेषण–

भारत के नगरों में मूलत: ग्रामीण जनसंख्या का स्थानान्तरण हो रहा है जिसका कारण जहाँ एक ओर गरीबी की समस्या, कृषि का क्षय, कुटीर उद्योगों का पतन रहा है वहीं दूसरी ओर नगरों का आकर्षण, रोजगार साधनों की उपलब्धता तथा अधिक से अधिक धन अर्जन करने की चाह है। शाही श्रम आयोग ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि ''प्रवास की प्रेरक शक्ति एक सिरे से आती है अर्थात् गाँवों से औद्योगिक श्रमिक

नागरिक जीवन के आकर्षण से शहरों में नहीं जाता और न उसके प्रवास का कारण महत्त्वाकांक्षा ही होती है। शहर स्वयं उसके लिए आकर्षण की वस्तु नहीं है और अपना गाँव छोड़ने के समय उसके मन में जीवन की आवश्यकताओं की प्राप्ति के अतिरिक्त और कोई भावना नहीं रहती। बहुत ही कम औद्योगिक श्रमिक नगर में रहना चाहेंगे, यदि उन्हें गाँवों में जीवन-यापन के लिए पर्याप्त अन्न और वस्त्र मिल जाए। वह नगर की ओर आकर्षित नहीं होते, अपितु अकेले जाते हैं।''

विभिन्न शोध यह लगातार बता रहे हैं कि शहरों में रह रहे अप्रवासी, अपने मूल स्थान में शिक्षा व्यवस्था की कमी, आय के साधनों की कमी और सुविधाओं के अभाव के कारण प्रवास करने के लिए विवश हुए हैं। अध्ययन यह भी बताता है कि शहरी क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधा की उपलब्धता भी आव्रजन का कारण है क्योंकि अधिकतर ग्रामों में चिकित्सालय का अभाव और यदि चिकित्सालय है तो चिकित्सकों की अनुपस्थिति गाँववासियों को गाँव छोड़ने के लिए विवश करती है।

आव्रजन के कारणों के साथ-साथ, जनगणना के आँकड़े यह स्पष्ट कर रहे हैं कि अप्रवासियों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। वर्ष 1991 की जनगणना में, 2.05 करोड़ मनुष्य नगरीय अप्रवासियों के रूप में वगीकृत किये गये। नगरीय अप्रवासन की सर्वाधिक संख्या महाराष्ट्र में (लगभग 35 लाख) तथा तदुपरांत दिल्ली में (लगभग 23 लाख) अंकित की गई। जबकि लक्षद्वीप में न्यूनतम केवल 3220 अप्रवासी थे। वर्ष 1991 की जनगणना का उल्लेखनीय परिदृश्य यह था कि सभी संघ शासित प्रदेशों (केवल दमन तथा दीप और लक्षद्वीप को छोड़कर) में नगरीय अप्रवासी 25 प्रतिशत से अधिक अंकित किए गए। भारत में अन्तर्राष्ट्रीय प्रवासन, अंत:राज्यीय प्रवासन की तुलना में कम है। वर्ष 1991 की जनगणना में लगभग 2.70 करोड़ अंतरराज्यीय प्रवासन दर्ज किया गया। अंतरराज्यीय प्रवासन में 32.83 प्रतिशत प्रवासन गाँव से नगर की ओर, जबकि नगर से गाँव की ओर प्रवासन मात्र 7.17 प्रतिशत था। यह तथ्य भारतीय अर्थव्यवस्था में शहरों के महत्व को दर्शाता है। अधिकांश अंतरराज्यीय प्रवासन केवल आर्थिक कारणों से ही नहीं होता। समस्त प्रवासियों में से लगभग तीन चौथाई महिलाएँ वैवाहिक कारणों से स्थानान्तरित होती है।

2011 के जनसंख्या आँकड़े बताते हैं कि दक्षिण के राज्यों, तमिलनाडु, कर्नाटक तथा आंध्र प्रदेश में आव्रजन का उल्लेखनीय अंतप्रवास रहा। राज्यों के बीच असमान विकास आव्रजन का मुख्य कारण समझा जाता है। परन्तु भारत के अधिकतर बड़े महानगर अंतप्रवास का केन्द्र बन चुके हैं और शहरों में काम के बेहतर और अधिक अवसरों के कारण जनसंख्या में तीव्र वृद्धि हो रही है। उदाहरणार्थ मुम्बई, दिल्ली जैसे शहर आप्रवासियों की बड़ी तादाद में आवक से बुरी तरह प्रभावित हैं।

भारत के नगरों में आव्रजन का प्रभाव– भारत के नगरों में आव्रजन के कारण गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हो गईं हैं जो देश के संपूर्ण नगरीय पर्यावरण को प्रभावित कर रहा है। अधिकांश महानगर एक चेतावनीपूर्ण दर से वृद्धि कर रहे हैं। इन महानगरों की जनसंख्या आने वाले वर्षों में दुगुनी हो जाने का अनुमान है। भारत की मलिन बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या 15 करोड़ पार कर चुकी है।

नगर में अप्रवासी जनसंख्या की निरंतर बढ़ोतरी के फलस्वरूप, अनेक सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं, जिसका सीधा और स्पष्ट कारण जनसंख्या के अनुपात में संसाधनों की कमी है। शोषण, असुरक्षा, असमानता, नैतिक पतन जैसी समस्याओं के मध्य नगरों की संस्कृति संघर्ष की ओर बढ़ रही है। यह कटु सत्य है कि अधिकांश अप्रवासी अशिक्षित, भूमिहीन तथा कौशलहीन हैं इसलिए नगरों में पूँजी गहन उत्पादन प्रणाली के अंतर्गत रोजगार प्राप्त करना विकट कार्य है। इन अकुशल प्रवासियों का असंगठित क्षेत्रों द्वारा शोषण किया जाता है, जहाँ प्रतिस्पर्द्धा, निम्न वेतन, असुरक्षा तथा निम्न उत्पादकता जैसे लक्षण विद्यमान रहते हैं।

अप्रवासी आवास की कमी तथा मूलभूत सेवाओं से वंचित होने को विवश हैं, जिसका कारण मूलभूत नगरीय सुविधाओं पर जनसंख्या का भारी दबाव होना है।

देश में अप्रवासियों की समस्याओं से निपटना, सरकार के लिए एक बड़ी चुनौती है। इसलिए यह जरूरी है कि सरकार, नियोजनकर्ता, नीति निर्माता, स्वयंसेवी संस्थाएँ एवं प्रशासक स्थिति से निपटने के लिए, कार्य योजना बनाएँ जिससे अप्रवासियों का जीवन बेहतर हो सके।

नगर नियोजन

किसी भी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु, एक विस्तृत रूपरेखा का निर्माण नियोजन कहलाता है। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा 21वीं शताब्दी के प्रारम्भिक चरण में नगरीकरण की प्रक्रिया बड़ी प्रबल हो गई, जिससे नगरों की संख्या एवं उनके आकार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। इस वृद्धि के फलस्वरूप नगरों से सम्बन्धित अनेकानेक समस्याएँ उत्पन हो गईं। नगरों के अनियंत्रित, अनियमित तथा अनियोजित स्वप्रसार से आवास, बिजली, जलापूर्ति, परिवहन, सीवर, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि आधारभूत आवश्यकताओं पर दबाव बढ़ा। इन सभी समस्याओं से मुक्ति का एकमात्र साधन है 'नगर आयोजना'। अर्थात् नगरों का विकास नियोजित ढंग से होना चाहिए और जो पुराने नगर विभिन्न समस्याओं से ग्रस्त हैं, उनके उद्धार के लिए उपयुक्त योजनाएँ निर्मित की जानी चाहिए।

नगर नियोजन का अर्थ– एल.डी. स्टाम्प ने नगर नियोजन को परिभाषितक रतेह ुएक हा,' 'नगरि नयोजनक ा विचारन ागरिकोंके कल्याण और जनता के जीवन स्तर के उन्नयन से सम्बन्धित है।'' वहीं लेविस ने नगर नियोजन को नगरीय विकास का भावी कार्यक्रम माना है। उनके अनुसार, ''नगर नियोजन बिल्कुल ऐसा दूरदर्शी प्रयास है जो नगर और उसके निकटस्थ क्षेत्रों के क्रमबद्ध और आकर्षक विकास का स्वास्थ्य सेवा, सुविधा और व्यापारिक तथा औद्योगिक उन्नयन को समुचित ध्यान में रखते हुए, युक्तिसंगत आधारों पर प्रोत्साहित करता है।''

स्पष्ट है कि नगर नियोजन एक प्रशासकीय योजना है जो नगर के

वर्तमान तथा भावी विकास के लिए विस्तृत कार्यक्रमों का निर्माण करती है।

नगर नियोजन के उद्देश्य– पैट्रिक एवरक्राम्बी ने नगर नियोजन के तीन उद्देश्यों की चर्चा की है–

1. सौंदर्य– नगर का सौंदर्य एवं उसकी आकर्षकता तो महत्वपूर्ण है परन्तु साथ ही साथ यह भी जरूरी है कि समय के साथ उसमें क्षीणता न आए। नगर की सुन्दरता बनाए रखने के लिए उसमें सफाई, प्रकाश आदि की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

2. स्वास्थ्य– स्वस्थ नागरिक किसी भी देश की निधि होते हैं। इसके लिए देश का वातावरण, वायु एवं जल प्रदूषण रहित होने चाहिये। नगर चूँकि देश का अभिभाज्य हिस्सा है इसलिए यह सिद्धान्त स्वाभाविक रूप से नगरों पर भी लागू होता है। उद्योगों एवं अन्य प्रदूषणकारी गतिविधियों की स्थापना नगर के किसी विशिष्ट भाग में इस प्रकार करनी चाहिये कि वहाँ के नागरिकों पर उनका प्रभाव न्यूनतम हो।

3. सुविधा– नगर में आधारभूत सुविधायें नगरवासियों के जीवन की सहजता और सुलभता के लिए अपरिहार्य है। उदाहरणत: यदि किसी नगर के औद्योगिक श्रमिकों को निवास स्थल से कार्य स्थल तक जाने में 1–2 घंटे का समय लग जाये तो उन्हें असुविधा होती है। परन्तु यदि परिवहन की उचित व्यवस्था हो और अधिक दूरी कम समय में पूरी हो तो यकीनन यह हर दृष्टिकोण से नगरवासियों का जीवन सुलभ करेगा।

नगर नियोजन के आदर्श–

1. नगर का विकास नगर के निवासियों की सभ्यता, संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था तथा रीति–रिवाजों के अनुकूल होना चाहिए।
2 नगरभ वनोंत थाब हुमंजिलाइ मारतोंक ा िनर्माण,म ूलभूत सेवाओंअ ौरस ुविधाओंक ेध यानम ें र खकर ा कयाज ाना चाहिये तथा उनके अनियोजित विकास को नियंत्रित किये जाने को प्राथमिकता देनी चाहिए।
3. नगर के सुनियोजित तथा क्रमबद्ध विकास की निश्चित योजना तैयार करना महत्वपूर्ण है, जिससे भविष्य में नगर के प्रसार में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न न हो।
4. नगर की योजना में व्यापार, वाणिज्य तथा व्यवसायों का उचित प्रावधान होना चाहिए ताकि नगर को ठोस आर्थिक आधार प्राप्त हो सके।
5. नगर के निकट निर्माण योग्य समस्त भूमि को नगर नियोजन में सम्मिलित कर लेना चाहिये ताकि भविष्य में नगर की परिधि का विकास सहजता से हो सके।

नगर नियोजन के तत्व–

ए. ऑगिस्टन ने नगर नियोजन में निम्नलिखित चार तत्वों के समावेश पर बल दिया है–

1. व्यापार, 2. आवास, 3. उद्योग, 4. प्रशासक।

नगर को इस प्रकार से सुनियोजित रूप से निर्मित किया जाना चाहिये कि नगर में व्यापार एवं उद्योग की उन्नति हो, प्रशासन व्यवस्था सुदृढ़ हो तथा नगर निवासियों को आवास की सुविधा मिले।

एडवर्ड एम. बैसेट ने नगर नियोजन में सात तत्वों के महत्व का उल्लेख किया है। ये तत्व हैं–

1. सड़कें, 2. पार्क, 3. सार्वजनिक भवनों के लिए स्थान, 4. सार्वजनिक सुरक्षित स्थान, 5. कटिबंधीय जिले, 6. सार्वजनिक उपयोगी मार्ग तथा 7. छोटी सड़कें।

नगर नियोजन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि–

वैदिक काल में अनेक नगरों का निर्माण किया गया, जिसमें कन्नौज, अयोध्या, मथुरा, मुदैर, सांची, कांचीपुरम, पाटलिपुत्र, हस्तिनापुर, जनकपुरी आदि उल्लेखनीय है। ये नगर उस समय की नगर नियोजन कला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इन नगरों में अलग–अलग कार्यों के लिए अलग–अलग भू–भाग निश्चित किये गये थे और इस विभाजन की योजना वैज्ञानिक ढंग से निर्मित की गई थी। नगर यिनोजन के परिप्रेक्ष्य से अगर हम तत्कालीन अयोध्या का विश्लेषण करते हैं तो पाते हैं कि यह नगर 6000 गज लम्बा तथा 1500 गज चौड़ा था, जिसमें चौड़ी सुंदर सड़कें थी। सड़कों के किनारों पर सुन्दर मकान थे और समस्त नगर में पेयजल की उचित व्यवस्था थी।

पाटलिपुत्र (वर्तमान पटना) के नगर नियोजन के सम्बन्ध में मैगस्थनीज के विचार उल्लेखनीय हैं जो उन्होंने अपनी भारत यात्रा के दौरान, पाटलिपुत्र का वर्णन करते हुए कहे थे। वे कहते हैं "यह नगर 12 मील लम्बा तथा 2 मील चौड़ा था। इसमें एक किला था, जिसमें 60 दरवाजे थे। शाही महल नगर के मध्य में स्थित था और महल के चारों और पार्क, फव्वारे, तालाब आदि महल की शोभा को बढ़ाते थे। सुरक्षा की दृष्टि से नगर के चारों ओर खाई का निर्माण किया गया था।"

देश की राजधानी जो कि पिछले दो हजार वर्षों में आक्रमणकारियों के निशाने पर रही कि स्थापना इंद्रप्रस्थ नगरी के रूप में मानी जाती है। इंद्रप्रस्थ भव्य महलों, तालाबों, सुंदर इमारतों तथा उद्यानों से सुसज्जित था। यह नगर 1240 एकड़ भूमि पर फैला हुआ था। इसमें 60,000 व्यक्तियों के रहने की व्यवस्था थी। इस नगर में चौड़ी सड़कें थीं जो एक दूसरे को समकोण पर मिलाती थी।

मध्यकाल में बसाये गए नगरों में जयपुर का विशिष्ट स्थान है जिसे 1727 ई. में महाराजा सवाई जयसिंह ने सुनियोजित ढंग से बनाया था। आयताकार प्रतिरूप वाले इस नगर का विस्तार 8 वर्ग किमी. क्षेत्र पर है। इसकी चौड़ी, साफ–सुथरी सड़कें तथा सुन्दर इमारतें नगर नियोजन का अद्भुत उदाहरण है।

19वीं शताब्दी में भारत में अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित हो जाने के परिणामस्वरूप भारतीय नगरों पर अंग्रेजी नगर नियोजन की छाप दिखाई देने लगी थी। अंग्रेजों ने अपनी प्रशासनिक व्यवस्थाओं के सुचारू संचालन के लिये मैसूर, बड़ौदा, दिल्ली, कलकत्ता आदि नगरों का नियोजन कार्य प्रारम्भ किया। इन नगरों की योजनायें सैनिक इंजीनियरों ने तैयार की थी। 1911 में देश की राजधानी कलकत्ता से दिल्ली स्थानान्तरित

हुई। अत: 1912 में दिल्ली, कटक तथा यमुना नदी के बीच पाँच मील लम्बे एवं चार मील चौड़े क्षेत्र पर नई दिल्ली का निर्माण करने के लिए नगर योजना निर्मित की गई। इसका विकास ब्रिटिश नगर नियोजक एडविन ल्यूटेन्स द्वारा बनाई गई योजना के अनुसार उपवन नगर के रूप में किया गया।

1950 के पश्चात् नियोजन काल में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में नगरीय नियोजन पर महत्वपूर्ण कार्य हुए। औद्योगिक एवं व्यापारिक विकास के लिए तथा प्रशासकीय केन्द्र के रूप में अनेक नये नगर बसाये गये। स्वतंत्र भारत में स्थापति नियोजित नगरों में औद्योगिक नगर बोकारो, राउरकेला, दुर्गापुर, भिलाई और प्रशासकीय नगर गांधी नगर, चंडीगढ़, भुवनेश्वर आदि उल्लेखनीय है।

भारत में नगर नियोजन में बाधाएँ–

- योजना निर्माण एवं उसके कार्यान्वयन के मध्य एक गहरा अंतराल होने के कारण अल्पविकसित आधार संरचना के फलस्वरूप नगरीय विस्तार मूलभूत सुविधाओं के बगैर होता है। अलग-अलग कारणों से खाली छोड़े गए भूखंडों पर मलिन बस्तियों का विस्तार होने लगता है।
- नगरीयय ोजनान गर ि नगमक ीस ीमाद्ध ारास ीमितह ोतीह ै इ स सीमित योजना के परिणामस्वरूप पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में आने वाले उपनगरों के बिना आधार संरचनात्मक समर्थन के उद्योगों की स्थापना, एक ऐसी समस्या बन कर उभरी है जिसके कारण नगरीय स्थान का अव्यवस्थित विकास होता है।
- आधारभूत संरचनाओं के मध्य समन्वयता के अभाव के चलते नगरीय विकास अवरुद्ध होता है यथा विद्युत, जलापूर्ति, गंदगी निस्तारण तथा टेलीफोन जैसी सेवाओं के मध्य समन्वय का अभाव नवस्थापित उद्योगों का विकास धीमे कर देता है।

नगर नियोजन की नगर विकास में भूमिका का विश्लेषण

भारत में नियोजित नगरीय विकास के प्रयास 60 के दशक में शुरू हुए थे, पर इस दिशा में जो भी योजनाएँ बनायी गयी उसका केन्द्र बिन्दु भूमि प्रयोग तक की सीमित था अर्थात् भौतिक पक्षों तक ही सीमित था। उनमें सामाजिक आर्थिक विकास के पक्षों की अवहेलना की गई। एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि समस्या कभी योजना निर्माण के कारण उत्पन्न नहीं होती। समस्या का कारण योजनाओं की क्रियान्विति में बरती गयी ढिलाई है।

आवश्यकता है कि प्रमुख महानगरों की राजस्व प्राप्त करने की क्षमता का विस्तारण करके एवं आर्थिक महत्व को दृष्टि में रखते हुए नगरों में विशेषीकृत आधार संरचना के विकास को प्राथमिकता दी जाए। इसी उद्देश्य से 1993-94 में एक मेगासिटी योजना आरम्भ की गयी थी, जो राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग द्वारा अनुशंसित थी। यह योजना मुम्बई, कोलकाता, बेंगलूरु, हैदराबाद एवं चेन्नई में क्रियान्वित की गयी। इस योजना की मुख्य प्राथमिकता आधारभूत संरचना का विकास थी।

1979-80 में मध्यम एवं लघु श्रेणी के नगरों के संतुलित विकास हेतु लघु एवं मध्यम नगर एकीकृत विकास योजना (आईडीएसएमटी) आरम्भ की गई थी। इस योजना का उद्देश्य नगरों की भीड़-भाड़ को कम करने के दृष्टि से मध्य व छोटे नगरों को उपनगरों के रूप में विकसित किया जाना है।

नगर एवं देश योजना संगठन, देश में नगर नियोजन से जुड़ी शीर्ष संस्था है। यह सरकार की नगरीय एवं क्षेत्रीय विकास योजनाओं के लिए तकनीकी मार्गदर्शन उपलब्ध कराती हैं। यह सार्वजनिक एवं स्थानीय निकायों को भी परामर्श प्रदान करती है।

राष्ट्रीय नगर नीति में ग्रामीण-नगरीय सातत्य के विकास का प्रमुख लक्ष्य बनाया गया है जिसके अनुसार ग्राम के क्रमिक विकास से उसकी पदोन्नति लघु नगर तथा नगर के रूप में होती है। नगरीय नीति की प्राथमिकताओं में लघु तथा मध्यम श्रेणी के नगरों में अध:संरचनात्मक सुविधाओं को विकसित करना प्रमुख लक्ष्य है। इस नीति का उद्देश्य ऐसे सुदृढ़ नगरीय ढांचे का निर्माण करना है जो ग्रामीण विकास का पूरक बन सके और देश के विकास में योगदान दे सके।

आवास

नगरीय विकास के साथ जो प्रमुख चुनौती उभर कर आयी है वह है 'आवास' की कमी। इस विषय पर चर्चा करने से पूर्व हमारे लिए यह जानना जरूरी हो जाता है कि आवास किसे कहते हैं और वह कैसा होना चाहिए?

आवास, केवल चार दीवारों और छत से निर्मित नहीं होता। आवास की अवधारणा में बुनियादी अर्थात् मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्तिक ी॰ यवस्थाह ोनीच ाहिए,ज ैसेप ीनेक ि लिएश ुद्धप ानी,ज ल निकासी की उचित व्यवस्था, बच्चों के लिए आवासीय क्षेत्र के निकट विद्यालय, औषधालय, सामुदायिक केन्द्र आदि।

आवास कैसा होना चाहिये–

आवास का निर्माण करते समय निम्नांकित बातों का ध्यान रखने की आवश्यकता है–

- आवास सदैव ऊँचे स्थान पर निर्मित किए जाने का प्रयास किया जाना चाहिये।
- आवास में रोशनी तथा हवा की व्यवस्था होनी चाहिए।
- परिवार में सदस्यों के अनुसार कक्षों का निर्माण होना चाहिऐ।
- रसोईघर, शौचालय एवं स्नानागार की व्यवस्था होनी चाहिऐ।

उपर्युक्त सभी विशेषताएँ आवास निर्माण की अपेक्षित आवश्यकताएँ हैं जिनमें परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तन किये जा सकते हैं।

आवासों के प्रकार–

I. प्रथम श्रेणी– इस श्रेणी में पक्के आवास आते हैं, जिनकी

दीवारें ईंट तथा पत्थर की होती हैं, जिसमें छत पक्की, खपरैल या सीमेंट चादरों की होती हैं। ऐसे आवास नगरों में पाए जाते हैं।

II. द्वितीय श्रेणी– इस श्रेणी में मिट्टी की दीवार वाले मकान आते हैं। इस प्रकार के मकानों में छत खपरैल या टीन की चादरों की होती है। इस श्रेणी के आवास नगर की मलिन बस्तियों में पाए जाते हैं।

III. तृतीय श्रेणी– इस श्रेणी के अंतर्गत घास-फूँस से बनी झोपड़ियाँ आती हैं। ऐसे आवास मूलत: गाँवों में ही पाए जाते हैं।

आवास की समस्या– यूँ तो आवास की समस्या विश्वभर में व्याप्त है, लेकिन भारत में यह स्थिति अधिक विकराल है। संयुक्त राष्ट्र संघके ए कफै सलेके अ नुसारव र्ष1 987क ेिअ ावासहीनोंके ि लए आवास उपलब्ध कराने के उद्देश्य से उस वर्ष को अंतर्राष्ट्रीय वर्ष के रूप में मनाया गया था और इसके तहत हर देश में आवास नीति को नये सिरे से निर्माण करना तथा सन् 2000 तक सभी गरीबों के लिए आवास उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया था।

शहरी क्षेत्रों में आवासीय सुविधायें उपलब्ध कराने की दिशा में निम्नलिखित बाधाएँ व्याप्त हैं–

1. वित्त की कमी– भारतीय नगरीय क्षेत्रों में रहने वाले अधिकाँश लोग 'मध्यमवर्गीय और निम्न मध्यमवर्गीय परिवारों' से हैं, जिनके पास वित्त संसाधनों की उपलब्धता नहीं होती। ऊँची बढ़ती हुई जमीन और आवास की कीमतों की अपेक्षाकृत उनके आय के स्रोत कम होते हैं ऐसे में उनके पास एक मात्र विकल्प बचता है बैंकों तथा जीवन बीमा निगम जैसी संस्थाओं से ऋण लेकर आवास खरीदना परन्तु ऋण लेना एक सहज प्रक्रिया नहीं है। ये संस्थाएँ भी ऋण देने से पहले व्यक्ति की नियमित आय के स्रोतों की जानकारी प्राप्त करती हैं और उसमें कमी के अभाव में ऋण नहीं दिया जाता।

2. भूमि की कमी– प्रत्येक 10 लाख अतिरिक्त आवास इकाइयों हेतु 6 हजार हैक्टेयर भूमि की आवश्यकता होती है। इसी उद्देश्य से सरकार द्वारा शहरी भूमि (सीलिंग एंड रेगुलेशन) अधिनियम लागू किया गया। इस अधिनियम के माध्यम से कुछ लोगों के हाथों में शहरी भूमि के संकेन्द्रण को रोका गया। परन्तु वास्तविकता में भू-माफिया ने इसके अनेक तोड़ निकाल लिये और आज अधिकांश नगरों में येन-केन प्रकारेण भू-माफियों ने भूमि पर कब्जे कर रखे हैं।

3. भवन निर्माण सामग्री की उच्च लागत– भवन निर्माण सामग्री कुल निर्माण लागत का 65 से 75 प्रतिशत तक वहन करती है और जब तक भवन निर्मित होता है उसकी अनुमानत: लागत से कहीं अधिक इसलिए खर्चा हो जाता है कि भवन निर्माण की प्रक्रिया के मध्य भवन निर्माण सामग्री की कीमत बहुत अधिक बढ़ जाती है।

नगरों में आवासों की वर्तमान स्थिति

आवास का तात्पर्य चार दीवारी एवं छत मात्र से नहीं है। आवास की अवधारणा में मूलभूत सुविधाओं की उपलब्धता भी है। विगत वर्षों में विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी स्तरों पर हो रहे प्रयासों के चलते इस स्थिति में सकारात्मक सुधार आया है। आवासीय गुणवत्ता इस तथ्य से पता चली है कि आवासीय परिसर में पीने के पानी के उपलब्धता है या नहीं, जल निकासी की व्यवस्था किस स्तर की है, या फिर आवास में विद्युत आपूर्ति है या नहीं? इन सभी दृष्टिकोणों के परिप्रेक्ष्य में अगर हम आवासों की नगरों में स्थिति का विश्लेषण करते हैं तो निम्नांकित तथ्य सामने आते हैं–

• भारत में जनगणना आवासों की स्थिति 2011

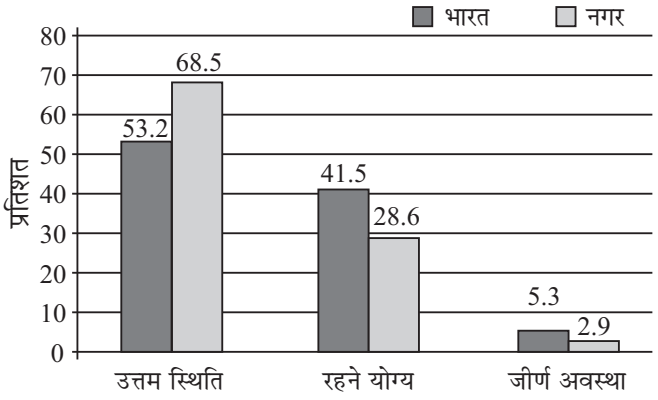

- लगभग 70% शहरी जनगणना आवास अच्छी हालत में हैं जो शहरी क्षेत्रों में जीवन स्तर में सुधार का प्रतीक है।

• आवासीय परिसर में पीने के पानी के स्रोत के आधार पर घरों का संवितरण, 2011

	नल का पानी	नलकूप (हैंडपंप)	ढका हुआ कुआं	ट्यूबवैल/ बोरहोल
कुल	43.5	33.5	1.6	8.5
शहरी	70.6	11.9	1.7	8.9

- अधिकांश शहरी घर पीने के पानी के स्रोत के रूप में नल के पानी का उपयोग कर रहे हैं।

• शौचालय सुविधा वाले घर, भारत, 2001-2011

	परिसरों के अंदर शौचालय सुविधा है		परिसरों के अंदर शौचालय सुविधा नहीं है	
	2001	2011	2001	2011
कुल	36.4	46.9	63.6	53.0
ग्रामीण	21.9	30.7	78.1	69.3
शहरी	73.7	81.4	26.3	18.6
ग्रामीण-शहरी अंतर	51.8	50.7	–51.8	–50.7

- शहरी क्षेत्रों में शौचालय सुविधा में उल्लेखनीय सुधार दर्शाया गया, क्योंकि 82% शहरी घरों में परिसरों के अन्दर शौचालय सुविधा है लेकिन अभी भी 18% घरों को परिसर के अन्दर शौचालय की सुविधा की आवश्यकता है।

• **शहरी भारत में पेयजल स्रोत तक पहुँच 2001-2011**

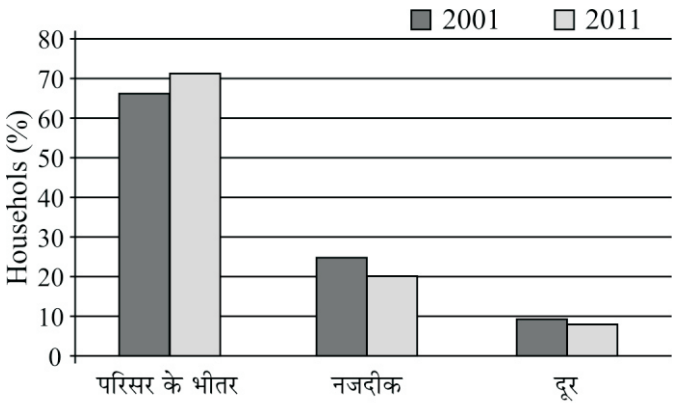

• पिछले दशक में पेयजल तक पहुँच में वृद्धि हुई है, लेकिन सुधार की गति अभी भी धीमी है।

• **प्रकाश के मुख्य स्रोत के रूप में विद्युत वाले घर, भारत 1991-2001**

भारत		विद्युत	(घर % में)
	1991	2001	2011
कुल	42.4	55.9	67.3
ग्रामीण	27.2	43.5	55.3
शहरी	64.8	87.6	92.7

• विद्युत वाले घरों के अनुपात में 1991-2011 की अवधि में वृद्धि हुई है, वर्ष 2011 में लगभग 93 प्रतिशत घर प्रकाश के स्रोत के रूप में विद्युत का उपयोग कर रहे हैं।

उपर्युक्त आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि विगत दस वर्षों में भारत के आवासों की स्थिति में सकारात्मक बदलाव आया हैं। यह विश्वास किया जा रहा है कि आने वाले समय में इस स्थिति में और बदलाव आएगा क्योंकि सरकारी स्तर पर नगरीय क्षेत्रों में निवास कर रहे लोगों के जीवन स्तर को सुधारने हेतु प्रयास किये जा रहे हैं।

आवास उपलब्धता के लिए सरकारी स्तर पर प्रयास

कुछ वर्षों पूर्व तक आवास को उपभोक्ता वस्तु समझा जाता था, लेकिन बीते दिनों में विश्व में यह विचार बना है कि आवास को मात्र उपभोक्ता वस्तु न समझा जाये क्योंकि ये समूची विकास प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। भारत में आवास, रोजगार के अवसर पैदा करने वाला दूसरा सबसे बड़ा क्षेत्र है। भवन निर्माण में प्रतिवर्ष दस प्रतिशत से अधिक रोजगार के अवसरों की वृद्धि को दर्ज किया गया है।

यह एक सराहनीय बात है कि सरकारी स्तर पर ऐसे अनेक कदम उठाये गये हैं जो आवास निर्माण गतिविधियों को बढ़ाने के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने में सहायक होंगे। इनका मुख्य उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों, कम आय वाले लोगों और इस प्रकार के अन्य कमजोर लोगों जैसे गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों, ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों तथा कारीगरों आदि को सस्ते मकान उपलब्ध कराना है।

राष्ट्रीय आवास नीति

वर्ष 1950 के बाद भारत सरकार ने बारह पंचवर्षीय योजनाएँ बनायी जिनका उद्देश्य आवास और शहरी विकास है, इसी के परिणामस्वरूप नेहरू रोजगार योजना के शहरी निर्धनता-उन्मूलन कार्यक्रम की शुरुआत हुई। इस योजनाओं में संस्था निर्माण तथा सरकारी कर्मचारियों एवं कमजोर वर्गों के लिये मकानों के निर्माण पर जोर दिया गया। 'ग्लोबल शेल्टर स्टेट (जीएसएस) की अनुवर्ती कार्रवाई के रूप में 1998 में राष्ट्रीय आवास नीति की घोषणा की गई जिसका दीर्घकालिक उद्देश्य आवासों की कमी की समस्याओं को दूर करना, अपर्याप्त आवास व्यवस्था की आवासीय स्थितियों को सुधारना तथा सबके लिए बुनियादी सेवाओं एवं सुविधाओं का एक न्यूनतम स्तर मुहैया कराना था।

केन्द्र सरकार के स्तर पर राष्ट्रीय आवास नीति को लागू करने की दिशा में कई उपाय किए गए हैं।

प्रधानमंत्री आवास योजना सबके लिए आवास (शहरी)-

इस मिशन का आरम्भ सन् 2015 में हुआ। 2015-2022 के मध्य इस मिशन को कार्यान्वित किया जाएगा और निम्नलिखित कार्यों के लिये शहरी स्थानीय निकायों तथा अन्य कार्यान्वयन ऐजेंसियों को राज्यों/संघ शासित प्रदेशों के जरिये केन्द्रीय सहायता उपलब्ध करायी जाएगी-

- निजी भागीदारी के जरिये संसाधन के रूप में, भूमि का उपयोग करके मौजूदा झुग्गीवासियों का यथास्थान पुनर्वास।
- ऋण सम्बद्ध सहायता।
- भागीदारी में किफायती आवास।
- लाभार्थी के नेतृत्व वाले आवास के निर्माण/विस्तार के लिए सहायता।

आवास निर्माण की सहायक संस्थाएँ-

देश में आवास समस्या को देखते हुए आवासों के निर्माण की अत्यन्त आवश्यकता है। इसलिए निजी, सार्वजनिक क्षेत्र की अनेक संस्थाएँ आवासों के निर्माण में संलग्न हैं।

I. आवास निर्माण में निजी क्षेत्र की भूमिका- नगरीय क्षेत्र में आवास निर्माण में ठेकेदारों का प्राय: सहयोग लिया जाता है। आवासों की माँग बढ़ने के कारण निजी बिल्डर्स का व्यवसाय भी निरंतर बढ़ता जा रहा है किन्तु इस क्षेत्र में केवल उच्च आय समूह तथा उच्च मध्यम आय समूह के लोगों की ही आवास आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

II. आवास निर्माण में सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका- आवास निर्माण के कार्य में केन्द्र सरकार, सार्वजनिक वित्तीय संस्थाएँ तथा विकास प्राधिकरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वर्ष 1957 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अंतर्गत एक ग्रामीण आवास योजना शुरू की गई, जिसमें व्यक्तियों तथा सहकारी समितियों को प्रति आवास अधिकतम 5000 रुपये उपलब्ध कराये गये। इस योजना के अंतर्गत 1980 तक 67000अ ावासब ने न्न यूनतमअ ावश्यकताक ार्यक्रमअ ारैब ीसस ूत्री

कार्यक्रम में ग्रामीण आवास स्थल एवं आवास निर्माण योजना को उच्च प्राथमिकता दी गयी।

महत्वपूर्ण बिन्दु

हमने इस अध्याय में नगरीय समाज के परिवर्तनों को तो जाना ही, साथ ही हमने इस बात की भी चर्चा की कि नगरीय विकास के क्या मुद्दे एवं चुनौतियाँ हैं? नगरों की आधारभूत संरचना, आवास, नियोजन एवं आव्रजन के बारे में भी हमने जाना। नगरीय समाज से जुड़े हुए लगभग सभी पक्षों को हमने इस अध्याय के माध्यम से जानने का प्रयास किया। एक बार पुन: इसके महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर हम दृष्टि डालेंगे–

- समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में नगरीय का अर्थ नगर में रहने वाले समुदाय से है।
- नगरीय समाज, तीव्र वैज्ञानिक, राजनैतिक, प्रौद्योगिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक या आर्थिक विकास से प्रभावित हो रहा है।
- सुनियोजित बस्तियाँ तथा सार्वजनिक स्थलों तक पहुँच, जल प्रबंधन, ऊर्जा एवं कचरे का प्रबंधन, प्राकृतिक व सांस्कृतिक संसाधनों का संरक्षण नगरीय विकास के प्रमुख मुद्दे हैं।
- आवास, गरीबी, प्रदूषण, भौतिक तथा वित्तीय समस्याएँ नगरीय समाज के लिए एक बड़ी चुनौती है।
- आधारभूत संरचना से तात्पर्य परिवहन, इमारतें, सार्वजनिक सुविधाएँ, जो कि किसी नगर में रहने वाले निवासियों का जीवन सहज एवं सरल बनाते हैं।
- आव्रजन सामाजिक परिवर्तन का सूचक है। अन्य स्थानों से आकर जिस स्थान पर मनुष्य बस जाते हैं, उसके सन्दर्भ में स्थानान्तरण को आप्रवास या आव्रजन और इसमें भाग लेने वालों को आप्रवासी कहते हैं।
- नगर नियोजन एक प्रशासकीय योजना है जो नगर के वर्तमान तथा भावी विकास के लिए विस्तृत कार्यक्रमों का निर्माण करती है।
- आवास से तात्पर्य केवल चार दीवारों और छत का निर्माण नहीं है अपितुइ सअ वधारणाम ेंब ुनियादीअ ावश्यकताओंक ीप ूर्तिक ी व्यवस्था होना चाहिए।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. नगरीय का अर्थ कहाँ रहने वाले समुदाय से है?
   (अ) कस्बा (ब) नगर
   (स) गाँव (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं
2. कितने प्रतिशत भारतीय परिवार 10 वर्गमीटर से कम जगह में रहते हैं?
   (अ) लगभग 32 प्रतिशत
   (ब) लगभग 28प्रतिशत
   (स) लगभग 19 प्रतिशत
   (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं
3. किस लेखक ने शहरों की व्यथा पर 'ए टेल ऑफ टू सिटीज' पुस्तक लिखी?
   (अ) चार्ल्स डिकेंस (ब) पैट्रिक एबरक्रामी
   (स) एल.डी. स्टाम्प (द) लेविस
4. ''नगर नियोजन का विचार नागरिकों के कल्याण और जनता के जीवन-स्तर के उन्नयन से सम्बन्धित है।'' यह वक्तव्य किस विद्वान का है?
   (अ) एल.डी. स्टाम्प (ब) ए. ऑगिस्टन
   (स) जॉन हॉब्स (द) चार्ल्स डिकेंस
5. एडवर्ड एम. बैसेट ने नगर नियोजन में कितने तत्त्वों के महत्त्व का उल्लेख किया है?
   (अ) पाँच (ब) दो
   (स) सात (द) छ:
6. 2011 की जनसंख्या के आँकड़ों के अनुसार, कितने प्रतिशत घर प्रकाश के स्रोत के रूप में विद्युत का उपयोग कर रहे हैं?
   (अ) लगभग 90 प्रतिशत
   (ब) लगभग 92 प्रतिशत
   (स) लगभग 93 प्रतिशत
   (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. नगरीय समाज के कैसे मूल्य हैं?
2. स्वार्थजनित सामाजिक सम्बन्ध किस समाज की विशेषता या लक्षण है?
3. सुनियोजित बस्तियों का अभाव कहाँ पाया जा रहा है?
4. सामान्य आर्थिक विचारधारा के कारण सम्पूर्ण विश्व, देशों के संघ की जगह किस का संघ बन गया है?
5. देश में कितने प्रतिशत नगरीय जनसंख्या के लिए अपने घरों के आसपास बरसाती पानी के निकासी की व्यवस्था नहीं है?
6. वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार कितने प्रतिशत शहरी जनसंख्या की पेयजल की आपूर्ति उसके परिसर में है?
7. केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड रिपोर्ट 2009 के अनुसार अधिकांश नगरों में निस्तारण से पहले उत्पादित सीवेज के कितने प्रतिशत का उपचार होता है?
8. आव्रजन में भाग लेने वालों को क्या कहते हैं?
9. वर्ष 1991 की जनगणना में कितने मनुष्य नगरीय अप्रवासियों के रूप में वर्गीकृत किए गए?
10. नगर नियोजन के सम्बन्ध में मैगस्थनीज ने भारत के किस नगर का उदाहरण प्रस्तुत किया?
11. 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में कितने प्रतिशत आवास अच्छी स्थिति में है?
12. वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत के कितने प्रतिशत घरों

के परिसर के अन्दर शौचालयों की आवश्यकता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. क्वीन और कारपेंटर ने नगरीयता के सम्बन्ध में क्या कहा, लिखें।
2. नगरीय समाज के तीन प्रमुख परिवर्तनों के नाम लिखें।
3. जल प्रबंधन से क्या तात्पर्य है?
4. जॉन हॉब्स ने 'सामाजिक समानता' के सम्बन्ध में क्या कहा, लिखें।
5. आधारभूत संरचना से क्या तात्पर्य है?
6. 'स्मार्ट सिटीज कार्यक्रम' के बारे में संक्षिप्त में लिखें।
7. आकार एवं क्षेत्र के अनुसार आव्रजन के प्रकार लिखें।
8. लेविस द्वारा नगर नियोजन की दी गई परिभाषा लिखें।
9. एडवर्ड एम. बैसंट ने नगर नियोजन के जिन तत्त्वों का उल्लेख किया है, लिखें।
10. आवास निर्माण के समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
11. आवासों के प्रकार लिखें।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. नगरीय समाज के परिवर्तनों के बारे में लिखें।
2. नगरीय समाज में विकास के मुद्दों की चर्चा कीजिए।
3. नगरीय समाज की क्या चुनौतियाँ हैं, लिखें।
4. नगरीय आधारभूत ढाँचे की स्थिति के बारे में लिखें।
5. आव्रजन को परिभाषित करते हुए, उसके कारणों का विश्लेषण करें।
6. नगर नियोजन के उद्देश्यों एवं आदर्शों की चर्चा करें।
7. आवास उपलब्धता के लिए सरकारी स्तर किये जाने वाले प्रयासों के सम्बन्ध में लिखें।

उत्तरमाला

1. (ब) 2. (स) 3. (अ) 4. (अ) 5. (स) 6. (स)।